पंजीयन क्रमांक 70269/98 के अंतर्गत भारत सरकार के समाचार पत्रों के रजिस्ट्रार द्वारा पंजीकृत

आई एस एस एन : 0972-169X
डाक पंजीयन क्रमांक : डी एल : 11360/2002

विज्ञान प्रसार की मासिक पत्रिका

ड्रीम 2047

मई 2002 खण्ड 4 अंक 8

विज्ञान प्रसार समाचार

सेटेलाइट रेडियो के माध्यम से विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी का प्रसार

6 मई 2002 को विज्ञान प्रसार द्वारा, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार के लिए वर्ल्डस्पेस सेटेलाइट डिजिटल रेडियो प्रणाली के प्रयोग की शुरुआत की गई। इस अवसर पर विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, नई दिल्ली में एक समारोह का आयोजन किया गया। आरंभ में, विज्ञान प्रसार के निदेशक, डॉ. विनय बी. काम्बले ने अतिथियों का स्वागत किया। अतिथियों में शासकीय/अशासकीय संगठनों के प्रतिनिधि, वैज्ञानिक समन्वयक और अन्य गण्यमान व्यक्ति उपस्थित थे। वर्ल्डस्पेस बंगलौर, के उपाध्यक्ष (प्रचालन) डॉ. डी. वेणुगोपाल ने वर्ल्डस्पेस रेडियो और इसके प्रयोगों के बारे में जानकारी दी। उद्घाटन–भाषण, प्रो. वी.एस. रामामूर्ति, सचिव, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार द्वारा दिया गया। इसके बाद वर्ल्डस्पेस रेडियो का प्रदर्शन एवं प्रयोगात्मक प्रसारण प्रस्तुत किया गया। इस प्रसारण में प्रो. वी.एस. रामामूर्ति, डॉ. नरेन्द्र सहगल, राविप्रौसंप के पूर्व प्रमुख एवं विज्ञान प्रसार के संस्थापक–निदेशक तथा डॉ. विनय बी. काम्बले ने विज्ञान–संचार के विभिन्न पहलुओं पर प्रकाश डाला। इन वार्ताओं के बीच–बीच में स्लाइड्स का भी प्रयोग किया गया था। ये स्लाइड, ध्वनि–प्रसारण से पूर्व डिजिटाइज़्ड डाटा के रूप में सेटेलाइट से प्राप्त किए गए थे। प्रदर्शन के बाद श्रोताओं ने प्रश्न पूछे और उनके उत्तर दिए गए।

यह प्रसारण उन 45 विपनेट साइन्स क्लबों द्वारा भी सुना गया जिन्हें वर्ल्डस्पेस रेडियो सेट्स इस उद्देश्य से दिए गए हैं कि वे अपने सदस्यों के लिए विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी से जुड़े कार्यक्रमों को सुनवाने के लिए श्रवण–गोष्ठियां आयोजित करें। विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार के लिए वर्ल्डस्पेस रेडियो के प्रयोग के बारे में, विज्ञान–क्लबों द्वारा लगातार रिपोर्टें आ रही हैं।

(बैठे हुए बांए से दांए) डॉ. डी. वेणुगोपाल, उपाध्यक्ष (प्रचालन), वर्ल्डस्पेस, डॉ. नरेन्द्र सहगल, पूर्व निदेशक विज्ञान प्रसार और प्रो. वी.एस. रामामूर्ति, सचिव, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग

विज्ञान प्रसार ने वर्ल्डस्पेस के सहयोग से वर्ल्डस्पेस रेडियो के दिल्ली के चार स्कूलों में प्रदर्शन आयोजित किए – मदर्स इन्टरनेशनल स्कूल अरबिन्दो मार्ग, हेरिटेज स्कूल बसन्तकुंज, एपीजे स्कूल, साकेत, डीटीइए (लोदी स्टेट) और कैम्ब्रिज इन्टरनेशनल स्कूल, नोएडा। विप्र और वर्ल्डस्पेस के अधिकारियों के दल ने रेडियो के प्रदर्शन के साथ डिजिटल सेटेलाइट रेडियो संचार की परिचयात्मक जानकारी भी दी। इन स्कूलों में इस प्रदर्शन कार्यक्रम का बड़े उत्साह से स्वागत हुआ। वास्तव में स्कूलों ने यह इच्छा प्रकट की थी कि वे शिक्षा तथा विशेष रूप से विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार के लिए, वर्ल्डस्पेस रेडियो का उपयोग करने वाली गतिविधियों की शुरुआत करना चाहते हैं। उन्होंने वर्ल्डस्पेस रेडियो के लिए कार्यक्रमों/सॉफ्टवेयर के निर्माण में भी सहयोग करने की अपनी उत्सुकता प्रकट की। यह उल्लेखनीय है कि विप्र देश के अन्य मेट्रो नगरों में भी वर्ल्ड स्पेस रेडियो के प्रदर्शन की योजना बना रहा है।

विप्र द्वारा प्रस्तुत प्रायोगिक कार्यक्रम को, इलेक्ट्रानिक मीडिया प्रोडक्शन सेन्टर, इंदिरा गांधी नेशनल ओपेन यूनिवर्सिटी में रिकार्ड किया गया था। सेन्टर के निदेशक डॉ. आर. श्रीधर के इस सहयोग के लिए विप्र. अपना हार्दिक आभार व्यक्त करता है। आडियो कैसेट्स तथा सी–डी रॉम की बातचीत का संपादन तथा दृश्य–सामग्री द्वारा कार्यक्रम की सज्जा श्री वी. कृष्णामूर्ति ने की थी, जिसके लिए विप्र. उनका आभारी है।

विज्ञान प्रसार समाचार शेष पृष्ठ 18 पर जारी....

इस अंक में

संपादकीय

- नाभिकीय विज्ञान तथा उसका उपयोग

- माइकेल फैराडे

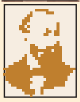

- ऐन्थ्रैसिस बेसिलस की खोज
- राष्ट्रीय साफ्टवेयर प्रौद्योगिकी केन्द्र
- ब्ल्यूटूथ
- विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की अभिनव उपलब्धियां

...वैज्ञानिक ढंग से सोचें, वैज्ञानिक ढंग से करें....वैज्ञानिक ढंग से सोचें, वैज्ञानिक ढंग से करें...वैज्ञानिक ढंग से सोचें, वैज्ञानिक...

विज्ञान प्रसार के लिए डॉ. सुबोध महंती द्वारा सी–24, कुतुब इंस्टीट्यूशनल एरिया, नई दिल्ली से प्रकाशित तथा उन्हीं की ओर से रैक्मो प्रेस प्रा. लि., सी–59, ओखला इंडस्ट्रीयल एरिया, फेस–I, नई दिल्ली–110 020 द्वारा मुद्रित

सम्पादक : डॉ. विनय बी. काम्बले

शानदार वापसी

कुछ ही महीने पहले हमने अटलांटिक महासागर के आर–पार इंग्लैण्ड से न्यू फाउंडलैण्ड तक गुगलिल्मो मार्कोनी द्वारा भेजी गयी बेतार सूचना की शताब्दी मनायी थी। वास्तव में, उस ऐतिहासिक घटना ने पूरे विश्व को एक वैश्विक गांव में बदलने की प्रक्रिया की शुरुआत कर दी। रेडियो संचार ने समाज की वृद्धि व विकास में कई तरीकों से सहयोग प्रदान किया है। इस तथ्य का प्रतिवाद नहीं किया जा सकता कि दशकों से विभिन्न क्षेत्रों में विज्ञान के कार्यों में हुई अभिवृद्धि के अलावा, संचार प्रौद्योगिकी ने भौगोलिक एवं सांस्कृतिक रूप से अलग लोगों को एक–दूसरे के समीप लाया है तथा समाज में समरसता लाने में सहायता की है। यह हमारे जैसे भाषायी विविधता और सांस्कृतिक अनेकता वाले बड़े देश के लिए विशेष रूप से सच है।

ऑल इंडिया रेडियो का वेबसाइट यह उल्लेख करता है कि भारत में पहला रेडियो कार्यक्रम जून 1923 में रेडियो क्लब ऑफ बॉम्बे द्वारा प्रसारित किया गया था। इसके बाद प्रसारण सेवा की स्थापना की गयी, जिसने भारत सरकार और इंडिया ब्रॉडकास्टिंग कम्पनी लिमिटेड नामक निजी कम्पनी के बीच हुए एक समझौते के तहत प्रयोगात्मक आधार पर बम्बई और कलकत्ता से जुलाई 1927 में भारत में प्रसारण प्रारंभ किया। भारत जब आजाद हुआ, तब ऑल इंडिया रेडियो के पास दिल्ली, बम्बई, कलकत्ता, मद्रास, लखनऊ और तिरुचिरापल्ली में स्थित मात्र छह स्टेशन थे, जहां कुल 18 ट्रांसमीटर मौजूद थे। इनमें से छह मीडियम वेव के और शेष शॉर्टवेव के थे। मीडियम वेव पर रेडियो सुनना केवल इन शहरों की शहरी सीमाओं तक ही सीमित था। आजादी के समय देश में मात्र 2,75,000 रेडियो सेट मौजूद थे।

1950 के दशक में अर्द्धचालक प्रौद्योगिकी के विकास ने रेडियो को कलाई घड़ी की तरह एक सामान्य वस्तु बना दिया। 1960 और 1970 के दशक में किसी के हाथ में दिखने वाला ट्रांजिस्टर रेडियो सेट उसी प्रकार आम था जैसा कि आज मोबाइल टेलीफोन दिखता है। इस समय देश में अनुमानतः 10 करोड़ रेडियो सेट हैं। इस प्रकार लगभग 10 लोगों पर एक रेडियो सेट आता है। प्रसारण परिदृश्य में भी काफी बड़े पैमाने पर परिवर्तन आये हैं। आज देश की प्रायः शत–प्रतिशत आबादी तक प्रसारण सेवा की पहुंच हो गयी है। लेकिन टेलीविजन की चमत्कारिक वृद्धि के परिणामस्वरूप, विशेषकर देश में 1982 में एशियाई खेलों के आयोजन के बाद, रेडियो को वस्तुतः पृष्ठभूमि में धकेल दिया गया।

किन्तु, पूर्ण सत्य यही नहीं है। 1990 के दशक में सैटेलाइट चैनल और डायरेक्ट–टू–होम टेलीविजन की पहुंच हो जाने के बावजूद, एफएम रेडियो के रूप में रेडियो का पुनरागमन हुआ। एफएम सेवाएं सिर्फ महानगरों तक सीमित थीं और वह भी मुख्यतः मनोरंजन के लिए। उसका विस्तार 80 से 100 किलोमीटर तक सीमित था। हाल ही में 'इंदिरा गांधी राष्ट्रीय खुला विश्वविद्यालय' ने शैक्षणिक उद्देश्यों के लिए एफएम रेडियो का इस्तेमाल किया है।

अब, मार्कोनी से एक शताब्दी तथा आर्थर सी. क्लार्क (जिसने वैश्विक संचार के लिए भू–तुल्यकालिक उपग्रहों की प्रणाली की अवधारणा सर्वप्रथम प्रस्तुत की) से आधी शताब्दी के बाद, वर्ल्डस्पेस डिजिटल रेडियो सिस्टम ने उपग्रहीय माध्यम से पुराने रेडियो को पुनरुज्जीवित करने का जिम्मा संभाला है। उल्लेखनीय तथ्य यह है कि यह भारत जैसे विशाल देश के सुदूरतम एवं अति अंतस्थ भागों को भी अपने विस्तार क्षेत्र में शामिल कर सकता है। डिजिटल रेडियो संचार के लिए यह अंतरिक्ष में 120^0 पर स्थित तीन भू–तुल्यकालिक उपग्रहों से सम्पन्न है। वस्तुतः यह एक विश्वव्यापी उपग्रह डिजिटल श्रव्य प्रणाली है। साथ ही यह एक मल्टीमीडिया प्रणाली भी है जो सीधे घरों में छोटे पोर्टेबल रेडियो–सेटों तक संकेत (सिग्नल) भेजने के लिए इन संचार उपग्रहों का इस्तेमाल करता है। इस प्रकार यह एक डायरेक्ट–टू–होम रेडियो है। विशिष्ट वैश्विक प्रसारण (रिले) क्षमता द्वारा पूरे विश्व से समाचारों, शैक्षणिक प्रसारणों और मनोरंजन की सीधी व जीवंत पहुंच इस प्रणाली की उल्लेखनीय विशेषता है। चूंकि यह प्रसारण डिजिटल होता है, इसलिए किसी व्यक्तिगत कम्प्यूटर में डाटा फाइलों को डाउनलोड किया जा सकता है। यहां तक कि स्लाइड्स और चित्रों को प्रसारित एवं संग्रहित करने के पश्चात व्यक्तिगत कम्प्यूटर में उन्हें सुरक्षित रखकर पूर्ण व्याख्यान सहित ध्वनि प्रसारण के साथ उसे मिश्रित (समाकलित) करना भी संभव होता है। इतना ही नहीं, इसके माध्यम से इंटरनेट पर कुछ चयनित वेबसाइटों तक पहुंचना भी संभव है।

विज्ञान व प्रौद्योगिकी संचार के लिए रेडियो का प्रयोग अपेक्षाकृत यह एक नयी घटना है। 1989 में 14 भारतीय भाषाओं में ''विज्ञान–विधि'' नामक 13 भागों में तथा 1991 में 1994 के दौरान एक साथ 18 भारतीय भाषाओं में 'मानव का विकास' नामक 144 भागों में रेडियो धारावाहिकों का ऑल इंडिया रेडियो के सभी केन्द्रों से प्रसारण हुआ, जो कि देश में विज्ञान व प्रौद्योगिकी के लोकप्रियकरण के इतिहास में वास्तविक अर्थों में मील का पत्थर साबित हुआ। विज्ञान प्रसार देश में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के लोकप्रियकरण के लिए वर्ल्डस्पेस के साथ मिलकर वर्ल्डस्पेस सैटेलाइट डिजिटल रेडियो सिस्टम का इस्तेमाल कर रहा है। विज्ञान प्रसार वर्ल्डस्पेस सैटेलाइट रेडियो के माध्यम से देशभर में फैले विपनेट साइंस क्लब से जुड़ने के प्रति आशान्वित है। उनमें से बहुत से क्लब देश के सुदूरवर्ती क्षेत्रों में स्थित हैं। आगे आने वाले दिनों में, यह अन्य स्थापित प्रौद्योगिकियों के साथ–साथ विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के लोकप्रियकरण, प्राकृतिक आपदाओं संबंधी शिक्षण एवं उनके प्रबंधन आदि के लिए उपग्रह रेडियो संचार की नयी व शक्तिशाली प्रौद्योगिकी के विस्तृत इस्तेमाल की योजना बना रहा है। हालांकि एक उपग्रह रेडियो रिसीवर आज तुलनात्मक रूप से काफी खर्चीला है (इसकी लागत 7 से 12 हजार रुपये आती है), लेकिन जैसा कि प्रत्येक नयी प्रौद्योगिकी के मामले में होता है, आगे आने वाले दिनों में इसकी लागत काफी कम हो सकती है। कुछ वर्षों पहले, सभी रेडियो सेटों में सिर्फ एएम होते थे, लेकिन अब प्रायः सभी रेडियो एएम और एफएम के साथ आते हैं। निकट भविष्य में, रेडियो में एएम और एफएम के अतिरिक्त एक उपग्रह चैनल भी शामिल किया जायेगा। वस्तुतः रेडियो की शानदार वापसी हुई है।

❐ विनय बी. काम्बले

सम्पादक : विनय बी. काम्बले
पत्र व्यवहार के लिए पता : **विज्ञान प्रसार** सी–24कुतुब इंस्टीट्यूशनल एरिया, नई दिल्ली–110016
दूरभाष : 6967532, फैक्सः 6965986
ई–मेल : vigyan@hub.nic.in
वेबसाइट : http://www.vigyanprasar.com

''ड्रीम 2047'' में प्रकाशित लेखों/प्रलेखों में व्यक्त लेखकों के कथनों, मतों व सुझावों के लिए विज्ञान प्रसार किसी भी रूप में उत्तरदायी नहीं है।

''ड्रीम 2047'' में प्रकाशित लेखों के अंश, सौजन्य/साभार के साथ पुनर्प्रकाशित/उद्धृत किए जा सकते हैं।

माइकेल फैराडे

एक सर्वकालिक महान् आविष्कारक

❐ सुबोध महंती

अगर कोई सत्य प्रकृति के नियमों से संगत रखता हो तो उससे उत्तम और कोई चीज नहीं हो सकती और इस संगत की सबसे अच्छी कसौटी प्रयोग है।

– माइकेल फैराडे

फैराडे के दौर को ध्यान में रखते हुए हम उसके कामों का जितना अध्ययन करते हैं, एक प्रयोगकर्ता और प्रकृति चिंतक के रूप में उसकी अप्रतिम प्रतिभा से उतना ही अधिक प्रभावित होते हैं। जब हम उसकी खोजों और विज्ञान तथा उद्योग के विकास पर उनके प्रभाव की मात्रा और विस्तार पर विचार करते हैं तो कोई भी सम्मान इतना बड़ा नहीं लगता जिसे महानतम सर्वकालिक आविष्कारकों में से एक – माइकेल फैराडे की स्मृतियों को अर्पित किया सके।

–अर्नेस्ट रदरफोर्ड

फैराडे के बारे में काफी कुछ लिखा जा चुका है, एवं अभी उसे और अधिक लिखा–पढ़ा जाएगा। ऐसा न केवल उनके आविष्कारों के अत्यधिक महत्वपूर्ण होने, एवं उनके द्वारा प्रतिपादित प्रचुर ऐतिहासिक सामग्री के कारण होगा, बल्कि इसलिए भी होगा कि उनके जीवन में 'गरीब से समृद्ध' बनने का रुमानी गुण निहित था और पूर्णता के समीप पहुंच चुका था। अतः वह उन लोगों के लिए हमेशा प्रेरणास्रोत बना रहेगा जिनका विज्ञान प्रेम अवसरों एवं औपचारिक शिक्षा की प्राप्ति का मोहताज नहीं है।

–जार्ज पोर्टर

वह (फैराडे) हर लिहाज से और हर मानदंड के अनुसार, एक अच्छे आदमी थे लेकिन वह अच्छाई ऐसी नहीं थी कि उनकी उपस्थिति दूसरों के लिए असहज होने का कारण बन जाए। उनका प्रबल कर्त्तव्यबोध उनके जीवन को उल्लासरहित नहीं कर सका था...... उनके गुण उन्हें तटस्थ नहीं, बल्कि क्रियाशील बनाते थे।

–टी. मार्टिन (माइकेल फैराडे के जीवनी लेखक)

माइकेल फैराडे के जीवन की कथा विज्ञान के इतिहास की सर्वाधिक रुमानी कहानियों में से एक है। यह अनेक प्रकार के लोगों को प्रेरणा देती रहेगी। एक जिल्दसाज के प्रशिक्षु की हैसियत से उठकर फैराडे सर्वकालिक वैज्ञानिकों में से एक बन गए। उन्हें अपने समय के महान् विचारकों में से एक माना जाता है। वह सही अर्थों में वैज्ञानिक आविष्कारों के अग्रदूत थे। उनके आविष्कारों ने बाद के वैज्ञानिक और प्रौद्योगिक विकास पर व्यापक प्रभाव डाला। मानव समाज के लिए फैराडे का योगदान असाधारण है। भौतिक विज्ञानियों और रसायनज्ञों, दोनों के लिए फैराडे समान रूप से सम्मानित अग्रदूत है। लेकिन उन्हें विशेषकर भौतिक विज्ञान में विद्युत और चुंबकत्व संबंधी समझ विकसित करने के लिए जाना जाता है। उनकी कई नव पथ निर्माणकारी खोजों में प्रेरित विद्युत (सन् 1831), स्थिर वैद्युत प्रेरण (सन् 1838), विद्युत और चुंबकत्व का संबंध (सन् 1838) और विद्युत तथा गुरुत्व का संबंध (सन् 1851), जल विद्युत सन् 1843 और वातावरणीय चुंबकत्व (सन् 1851) हैं। फैराडे विज्ञान में रुचि, अपनी प्रबल अभिप्रेरणा और अध्यवसाय के कारण ही महान् वैज्ञानिक बन सके।

वह यंत्रों के महान् निर्माता थे। फैराडे विज्ञान के महान् प्रचारक भी थे। उन्होंने रायल इंस्टीट्यूशन में बच्चों और आम श्रोताओं के लिए लोकरुचि के भाषणों का आयोजन करवाया। फैराडे अपने समय के महान्तम वक्ताओं में से एक थे। बच्चों के लिए क्रिसमस के अवसर पर रायल इंस्टीट्यूशन में दिया गया उनका भाषण ऐतिहासिक महत्व का बन गया। फैराडे के इन भाषणों का उद्देश्य दरअसल लोगों को 'आनंदित और उनका मनोरंजन करने के साथ ही उन्हें शिक्षित, उन्नत और सबसे बढ़कर उत्प्रेरित' करना था।

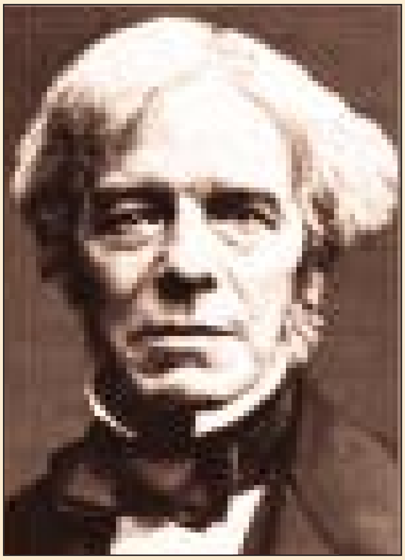

माइकेल फैराडे

व्यक्ति के तौर पर भी फैराडे उतने ही महान थे, जितने के वैज्ञानिक तौर पर। जीवन भर फैराडे एक उदार और नम्र व्यक्ति बने रहे। उन्हें सम्मान पाने की चिंता नहीं रहती थी। रायल सोसाइटी द्वारा उनके सामने जब संस्था का दुबारा अध्यक्ष बनने का प्रस्ताव रखा गया तो उन्होंने अपने उत्तराधिकारी और जीवनी लेखक जान टिंडल (1820–93) से कहा, ''मैं अंतिम समय तक केवल फैराडे ही बना रहना चाहता हूं, और मैं तुमसे कहना चाहता हूं कि अगर मैं रायल सोसाइटी द्वारा प्रस्तावित सम्मान को स्वीकार कर लेता तो एक साल के लिए भी अपनी बौद्धिक ईमानदारी से जवाबदेही नहीं कर पाता।''

फैराडे हमेशा अपने विज्ञान को अपनी अधिकतम क्षमता के साथ प्रयोग में लाने के लिए उत्सुक रहते थे। उन्होंने युनिवर्सिटी कॉलेज ऑफ लंदन में प्रोफेसर पद का प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया। इतना ही नहीं उन्होंने रायल सोसाइटी की अध्यक्षता और नाइट की उपाधि दो बार ठुकरा दी। पुरस्कारों के बारे में फैराडे की धारणा कुछ अलग ही थी। उनका कथन था, ''मैंने हमेशा महसूस किया है कि बौद्धिक प्रयासों के लिए पुरस्कारों को प्रदान करने में एक प्रकार की पतनशीलता आ गई है और इस मामले में समितियों, अकादमियों यहां तक कि राजाओं और सम्राटों के जुड़ जाने से भी यह पतनशीलता दूर नहीं हुई है।

माइकेल फैराडे का जन्म 22 सितंबर, 1791 को इंगलैंड के नेविंगटन, सुरे नामक स्थान पर हुआ था। उनके पिता जेम्स फैराडे एक लोहार थे और उत्तरी इंगलैंड स्थित यार्कशायर नामक स्थान से आए थे। उनकी माता मार्गेरेट हैस्टवेल एक किसान की पुत्री थीं! सन् 1791 में फैराडे के अभिभावक विंगटन चले आए। उन दिनों वह लंदन के बाहर स्थित एक गांव था और फैराडे के पिता को उम्मीद थी कि वहां उन्हें काफी काम मिलेगा।

फैराडे का परिवार ईसाई धर्म के सैंडेमेनियन मत का अनुयायी था। इसकी उत्पत्ति सन् 1780 के दशक में स्काटिश प्रेसबाइबिटेरियंस मत से अलग हुई एक शाखा के रूप में हुई थी। स्काटिश प्रेसबाइबिटेरियंस मत कैलिविनिस्टिक प्रोटेस्टैंट चर्च से जुड़ा हुआ था। जिसका नियंत्रण वयोवृद्ध पादरियों के हाथों में था। सैंडेमैनियन मत के अनुयायियों की संख्या कभी भी

कुछ सौ से अधिक नहीं रही। इस तरह यह एक अचर्चित मत था। इसके सदस्यों ने अपने मत के सिद्धांतों को फैलाने की चेष्टा नहीं की। उनका विश्वास था कि जिन्हें उनके समुदाय से जुड़ना है, वे खुद ब खुद उन तक पहुचने का रास्ता तलाश लेंगे। उस मत में पूर्ण विश्वास और पूर्ण प्रतिबद्धता पर जोर दिया जाता था। मत के सदस्यों का जीवन बाइबिल की उनकी व्याख्या के अनुसार चलता था। वे स्वयं को चर्च का सच्चा अनुयायी मानते थे और उनका विश्वास था कि उनकी मुक्ति सुनिश्चित है। इस तरह का विश्वास उन्हें संसार की कठिनाइयों के बीच शांति से जीवन जीने में सहायता देता था। सांसारिक वस्तुओं एवं धन–संपत्ति में उनकी आस्था नहीं थी। अपनी धार्मिक आस्थाओं के कारण फैराडे का नैतिक मान्यताओं में भी गहरा विश्वास था। फैराडे सैंडेमेनियन मत के श्रद्धालु सदस्य थे। उनके वैज्ञानिक विचार बाइबिल से काफी प्रभावित थे। यहां हम फैराडे के धार्मिक विश्वास और उनके काम पर उसके प्रभाव के बारे में जिम बैगट को उद्धृत कर रहे हैं।

हम्फ्री डेवी

बैगट ने सन् 1991 में 'न्यु साइंटिटिस्ट' में लिखा था : ''फैराडे एक वैज्ञानिक और दार्शनिक के रूप में अपने विचारों तथा कार्यों एवं अपने धार्मिक विश्वासों के बीच कोई द्वंद्व नहीं मानते थे। उनके विचार में प्राकृतिक नियमों की उनकी खोज ''प्राकृतिक नियमों के अध्ययन'' की सतत प्रक्रिया का अंग थी, और वह ईश्वर के नियमों की खोज करने के लिए बाइबिल के अध्ययन की प्रक्रिया से अलग नहीं थी। फैराडे के जीवन और कार्यों में ईश्वर और प्रकृति की एकरूपता का भाव काफी गहराई से व्याप्त है।''

फैराडे ने दिन में चलने वाले एक स्कूल में दाखिला लिया और महज प्रारंभिक शिक्षा हासिल की, यानी केवल पढ़ना–लिखना और गिनती करना सीखा (इसे अंग्रेजी में तीन प्रारंभिक ''R'', यानी **री**डिंग, **रा**इटिंग और (अ) **र**थमेटिक कहा जाता है)। उनकी पारिवारिक पृष्ठभूमि को देखते हुए इससे अधिक की उम्मीद भी नहीं की जा सकती थी। फैराडे का परिवार बेहद गरीब था। तेरह साल की उम्र में ही फैराडे को अपनी परिवार की आर्थिक मदद करने के लिए काम ढूढ़ना पड़ा। सन् 1804 में वह एक पुस्तक विक्रेता और जिल्दसाज जार्ज रिबाउ के यहां हरकारे की नौकरी पा गए। रिबाउ की दुकान फैराडे के घर के पास ही लैंडफोर्ड स्ट्रीट में थी। फैराडे का एक मुख्य काम अखबार उधार लेकर पढ़ने वालों तक अखबार पहुंचाना और उसे दुकान पर वापस लाना था। रिबाउ एक उदार प्रकृति का मालिक था। एक साल तक दौड़धूप का काम कराने के बाद उसने फैराडे को जिल्दासाजी का प्रशिक्षण देना शुरू किया।

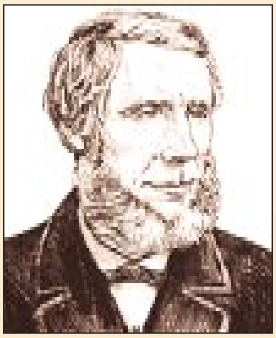
जॉन टिन्डेल

फैराडे ने जिल्दसाजी का काम काफी अच्छी तरह सीखा, यह इससे जाहिर होता है कि बाद के दिनों में उन्होंने अपने लिए पुस्तकों के कई खंडों की जिल्दसाजी की। उनमें से अनेक खंड तो अब तक मौजूद हैं। अपने प्रशिक्षण के दौरान फैराडे अधिकांश समय रिबाउ के परिसर में ही रहे। रिबाउ की उदारता की सराहना करनी चाहिए कि फैराडे और उसके साथ काम करने वाले दो प्रशिक्षुओं को अपनी रुचि विकसित करने का अवसर मिला। फैराडे ने न केवल किताबों की जिल्दसाजी की बल्कि उनको पढ़ा भी। अपनी प्रशिक्षण अवधि के दौरान उन्होंने जो किताबें पढ़ी, उनमें से दो पुस्तकों ने उनके भावी वैज्ञानिक विकास पर गहरा प्रभाव डाला। फैराडे द्वारा अपने एक मित्र डे ला रिवे को लिखे एक पत्र से यह बात स्पष्ट है। फैराडे ने लिखा : ''....सन् 1804 में 13 साल की उम्र में मैं एक पुस्तक विक्रेता और जिल्दसाज की दुकान में काम करने लगा और वहां आठ साल रहा। अधिकतर समय मैंने किताबों की जिल्दसाजी की। काम के बाद मिले समय में पढ़ी गई उन किताबों में ही मुझे अपने दर्शन का आधार मिला। उनमें से दो किताबों ने मेरी खास तौर पर मदद की – ''एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका'', जिसने मुझे विद्युत् के बारे में पहली अवधारणा दी, और श्रीमती मार्सेट् की ''रसायनशास्त्र पर चर्चा'', जिससे मुझे इस विज्ञान का आधार मिला। यह मत सोचिए कि मैं एक अत्यंत गंभीर विचारक था या अकालपक्व व्यक्ति के रूप में जाना जाता था। मैं अत्यंत जीवंत और कल्पनाशील व्यक्ति था और अरेबियन नाइट्स पर भी ''एनसाइक्लोपीडिया'' की ही तरह आसानी से विश्वास कर सकता था। लेकिन मेरे लिए तथ्यों का महत्व था, और इसी से मेरी रक्षा हुई। मैं तथ्यों में विश्वास करता था, और उनकी कसौटी पर दावों को परखता था। इसलिए जब मैं उपलब्ध साधनों से किए जा सकने वाले छोटे–छोटे प्रयोगों को श्रीमती मार्सेट् की किताब के सामने प्रश्न की तरह प्रस्तुत करता था, और उसे उस समय मेरी समझ में आ सकने वाले तथ्यों की कसौटी पर सही पाता था, तो मुझे लगता था कि रासायनिक ज्ञान के क्षेत्र का एक स्तंभ मिल गया है और मैं उसे जोरों से पकड़ लेता था। इसलिए मैं श्रीमती मार्सेट के प्रति अत्यंत सम्मान का भाव रखता हूं, इसका पहला कारण तो यह है कि उन्होंने व्यक्तिगत तौर पर मुझे काफी लाभ पहुंचाया, और आनंद दिया, और दूसरा कारण यह है कि वह प्राकृतिक वस्तुओं से संबंधित ज्ञान के असीम क्षेत्र के सत्य, और सिद्धांतों को युवा, अनजान और खोजी मस्तिष्क तक पहुंचाने में सक्षम थीं।''

रिबाउ के यहां प्रशिक्षण प्राप्त करने के दौरान ही फैराडे सिटी फिलॉसाफिकल सोसाइटी के संपर्क में आए। यह आत्म उन्नयन में रुचि रखने वाले कुछ युवकों द्वारा स्थापित संस्था थी। इस सोसाइटी ने प्राकृतिक दर्शन (मौजूदा दौर में विज्ञान के दायरे में आने वाले विषयों को उन दिनों प्राकृतिक दर्शन कहा जाता था) – पर आधारित एक सायंकालीन व्याख्यान शृंखला का आयोजन किया। फैराडे सन् 1812 में इस सोसाइटी के सदस्य बने। सोसाइटी सदस्यता शुल्क एक शिलिंग था। फैराडे का शुल्क उनके भाई राबर्ट ने अदा किया। दो साल तक फैराडे विभिन्न वैज्ञानिक विषयों पर व्याख्यान सुनते रहे। सोसाइटी में फैराडे के कई नए मित्र बने। उन्हीं में बेंजामिन एबॉट और एडवर्ड मैगराथ भी थे। एबॉट के साथ उन्होंने व्यापक पत्र व्यवहार किया। एक तरह से यह उनकी लेखकीय संप्रेषण क्षमता के विकास की अभ्यास प्रक्रिया थी। मैगराथ ने व्याकरण वर्तनी और विराम चिन्हों को सुधारने में उनकी मदद की। मैगराथ से फैराडे का संपर्क सात साल तक बना रहा।

काउंट एलेसेंड्रो वोल्टा

फैराडे ने सोसाइटी की बैठकों के दौरान लिए गए नोटों के चार खंड सजिल्द तैयार किए। फैराडे के सेवायोजक रिबाउ ने फैराडे के विज्ञान अध्ययन के प्रयासों को प्रोत्साहित किया। दरअसल रिबाउ फैराडे की इन पुस्तकों को अपने ग्राहकों को दिखाया करता था। रिबाउ के एक ग्राहक मि. डंस तो इन पुस्तकों से इतने प्रभावित हुए कि वह अपने पिता को दिखाने के लिए ये पुस्तकें उधार मांग कर ले गए। निश्चित तौर पर मिस्टर डंस के पिता भी फैराडे के नोटों से काफी प्रभावित हुए। यह इससे प्रमाणित होता है

कि उन्होंने रायल इंस्टीट्यूशन में हम्फ्री डेवी का भाषण सुनने के लिए फैराडे के पास टिकट भिजवाए। फैराडे ने रायल इंस्टीट्यूशन में चार भाषण सुने। डेवी के भाषणों ने फैराडे को मंत्रमुग्ध–सा कर दिया। उन्होंने काफी सावधानी से उन भाषणों के नोट लिए और डेवी द्वारा दर्शाए गए प्रयोगों के चित्रों के साथ उन भाषणों के बारे में लिख कर उनकी सजिल्द पुस्तकें तैयार की। डेवी के भाषणों ने विज्ञान में फैराडे की रुचि को और दृढ़ किया।

फैराडे सात साल तक रिबाउ के यहां प्रशिक्षु के तौर पर कार्य करते रहे। सन् 1813 में लिखे एक पत्र में रिबाउ ने बताया है कि फैराडे ने प्रशिक्षु के रूप में अपना समय किस प्रकार बिताया। उसने लिखा, ''काम के नियमित समय के बाद वह मुख्यत: बड़ी संख्या में प्रकाशित होने वाले कलाकारों के संग्रहों के चित्र उतारने और उनकी नकल करने के काम में लगे रहते थे, यह काम वह सप्ताह दर सप्ताह करते थे..... उन दिनों डॉ. वाट की 'इंप्रूवमेंट ऑफ द माइंड' पढ़ी जाती थी। फैराडे चाहे सुबह की सैर पर जाते हों, या किसी कलाकृति को देखने के लिए जाते हों, या उत्सुकतावश किसी खनिज या वनस्पति को ढूढ़ते हों, वह पुस्तक अक्सर उनकी जेब में पड़ी रहती थी...... वह जिल्दसाजी का काम तो तन्मयता से करते ही थे, उसके बाद भी उनका मस्तिष्क हमेशा सक्रिय रहता था।

डामिविक फ्रैंकोइस आर्गो

उनका जीने का ढंग संयमित था। सादे पानी के अलावा कोई और चीज वह कदाचित ही पीते थे, और दिन का काम खत्म करने के बाद काम की जगह पर ही नीचे लेट जाते थे. ...... अगर मुझे अपने ग्राहकों से प्लेट सहित जिल्दसाजी करने के लिए कोई जिज्ञासा जगाने वाली किताब मिलती थी, तो वह उसकी प्रतिलिपि यथा संभव दक्षता के साथ अनूठे ढंग से उतार लेते थे......''

रिबाउ के यहां फैराडे की प्रशिक्षण अवधि 7 अक्टूबर 1812 को समाप्त हो गई। उसके कुछ ही सप्ताह बाद उनकी इक्कीसवीं वर्षगांठ आने वाली थी। फैराडे काफी बेचैनी के साथ एक नौकरी की तलाश में थे, जहां वह विज्ञान में अपनी रुचि को बरकरार रख सकें। लेकिन जिल्दसाजी छोड़कर विज्ञान को पेशा बनाना न केवल मुश्किल बल्कि नामुमकिन लग रहा था। उन्होंने कोई औपचारिक शिक्षा हासिल नहीं की थी। फैराडे ने रायल सोसाइटी के तत्कालीन अध्यक्ष सर जोसेफ बैंक्स को पत्र लिख कर पूछा कि वह वैज्ञानिक कार्यों से कैसे जुड़े रह सकते हैं। लेकिन बैंक्स ने उत्तर देने का कष्ट नहीं किया। इसी बीच फैराडे ने डेला रोसे के लिए जिल्दसाजी का काम शुरू कर दिया। उनके पूर्व मालिक के विपरीत डेला रोसे सख्त मिजाज व्यक्ति था। बैंक्स से उत्तर न मिलने से निराश हुए बिना फैराडे ने हंफ्री डेवी को पत्र लिखा। उन्होंने डेवी के भाषण के दौरान लिए गए नोट भी पत्र के साथ भेजे। हंफ्री ने न केवल उनके पत्र का उत्तर दिया बल्कि मुलाकात की व्यवस्था भी की। लेकिन उस मुलाकात का कोई खास नतीजा नहीं निकला। डेवी ने फैराडे को जिल्दसाजी करते रहने की सलाह दी। उनका कहना था – ''विज्ञान एक शुष्क प्रेमिका है और धन के मामले में तो वह अपनी सेवा में समर्पित लोगों के प्रति काफी कंजूसी बरतती है।''

आंद्रे मेरी एंपीयर

लेकिन फरवरी 1813 में एक घटना घटी जिसने एक जिल्दसाज को सर्वकालिक महान वैज्ञानिक बना दिया। रायल इंस्टीट्यूशन के एक लेब्रोटरी असिस्टेंट विलियम पेने सार्वजनिक विवाद में फंस गए और उन्हें पद से बर्खास्त कर दिया गया। डेवी ने उस पद के लिए फैराडे का नाम प्रस्तावित किया। फैराडे के लिए डेवी की सिफारिश को रायल इंस्टीट्यूशन के प्रबंधकों के सामने 18 मार्च 1813 को हुई एक बैठक में विचार के लिए रखा गया। डेवी की सिफारिश कुछ इस तरह की थी :

''सर हंफ्री डेवी रायल इंस्टीट्यूशन के प्रबंधकों को यह सूचना देते हैं कि उन्होंने एक ऐसे आदमी को ढूंढ़ लिया है जो इंस्टीट्यूशन के उस पद पर काम करने का इच्छुक है, जिस पर हाल तक विलियम पेने काम करते थे। उसका नाम माइकेल फैराडे है। वह 22 साल का युवक है। जहां तक सर एच.डेवी ने जांचा या परखा है, वह इस पद के लिए बिल्कुल उपयुक्त लगता है। उसकी आदतें अच्छी हैं। वह सक्रिय और प्रसन्न प्रवृत्ति का है, और उसके तौर–तरीके बुद्धिमत्तापूर्ण हैं वह उन्हीं शर्तों पर काम करने के लिए तैयार है, जिन पर पेने संस्थान छोड़ते समय काम कर रहे थे।''

फैराडे यह काम मिल गया। उन्हें वेतन के रूप में प्रति सप्ताह एक गिनी (पुराना अंग्रेजी सिक्का जिसे सन् 1813 में आखिरी बार ढाला गया था – यह 21 शिलिंग के बराबर होता था) मिलने वाली थी। साथ ही उन्हें रायल इंस्टीट्यूशन भवन की ऊपरी मंजिल पर रहने के लिए दो कमरे भी मिल गए। फैराडे इस तरह का प्रस्ताव पाने के लिए लालायित थे। इसलिए उन्होंने यह काम सहज स्वीकार कर लिया। हालांकि इस काम के लिए उन्हें मिलने वाला वेतन जिल्दसाजी से होने वाली आमदनी से काफी कम था। अक्टूबर 1813 में डेवी ने यूरोप की यात्रा करने की योजना बनाई। यह यात्रा वैज्ञानिक कार्यों से संबंधित थी। डेवी ने प्रस्ताव रखा कि फैराडे सचिव और सहायक के रूप में उनके साथ चलें। डेवी के साथ विदेश यात्रा पर जाने के लिए फैराडे को रायल इंस्टीट्यूशन की अपनी नौकरी से त्यागपत्र देना पड़ता। लेकिन यह भी निश्चित था कि इंगलैंड लौटने पर फैराडे को वह नौकरी वापस मिल जाती। फैराडे नौकरी छोड़ने के लिए तैयार हो गए। इस यात्रा से पहले फैराडे ने लंदन के केन्द्र से 12 मील से अधिक दूर की यात्रा नहीं की थी। यह यात्रा 18 महीने तक चली और इस दौरान फैराडे को डेवी के अंशकालिक खिदमतगार और नौकर का काम भी करना पड़ा। डेवी की पत्नी को अपनी सामाजिक स्थिति का काफी अभिमान था, और वह नौकरों को काफी सख्ती से उनकी हद के अंदर रखने में विश्वास रखती थी। फैराडे के साथ उनका व्यवहार अच्छा नहीं था। इन तमाम असुविधाओं के बावजूद फैराडे ने इस यात्रा का पूरा आनंद उठाया। फैराडे ने अपने रोजनामचा में यात्रा के अनुभवों का उल्लेख किया। उन्हें काउंट अलेसान्द्रो वोल्टा (सन् 1745–1827), आंद्रे मेरी एंपीयर (सन् 1775–1836), जोसेफ लुइस गे–लुसाक (सन् 1778–1850), डामिविक फ्रैंकोइस (सन् 1786–1853), फ्रेडरिक हरमेन हेनरिक अलेक्जेंडर भन हमबोल्ड्ट (सन् 1769–1859) और जार्ज लिओपोल्ड क्रेटीन फ्रेडरीक डेगोबर्ट कुविअर (सन् 1769–1832) जैसी विज्ञान की महत्वपूर्ण हस्तियों से मिलने का मौका मिला। यूरोप में एक प्रयोगशाला से दूसरी प्रयोगशाला की यात्रा के दौरान फैराडे को प्रयोग करने और व्याख्यान सुनने के अवसर मिले तथा इस प्रक्रिया में उन्हें ऐसी शिक्षा मिली जिसे वह पहले कभी प्राप्त नहीं कर सके थे। हर लिहाज से इस यात्रा का फैराडे पर गहरा प्रभाव पड़ा। इस संबंध में फैराडे के जीवनीकार – टी.

जोसेफ लुइस गे – लुसाक

मार्टिन का कहना है, ''इन 18 महीनों का फैराडे के जीवन में वही स्थान था जो किसी अन्य व्यक्ति के जीवन में विश्वविद्यालय में बिताए गए वर्षों का होता है। उन्हें फ्रांस और इटली की भाषाओं का काम चलाऊ ज्ञान हुआ, उन्होंने अपनी वैज्ञानिक उपलब्धियों में उल्लेखनीय वृद्धि की, वह विज्ञान के क्षेत्र की उल्लेखनीय विदेशी हस्तियों से मिले और उनसे बात की, लेकिन उस समय उनके लिए सबसे बढ़कर और मूल्यवान बात यह थी कि उस यात्रा के प्रभाव से उन्होंने स्वयं का विस्तार होता अनुभव किया।''

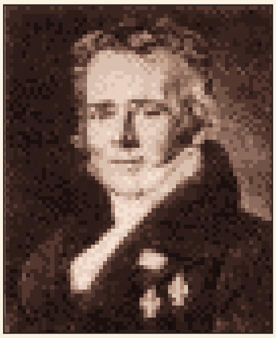
हेन्स क्रिश्चियन ओएर्स्टेड

सन् 1815 में लंदन लौटने पर वह पुनः रायल इंस्टीट्यूशन में सहायक के रूप में कार्य करने लगे। उनका काम मुख्यतः प्रयोगशाला के रासायनिक प्रयोगों से संबंधित था। उन्होंने फिलॉसॉफिकल सोसाइटी में रासायनिक विषयों पर व्याख्यान देना भी शुरू कर दिया। उन्होंने अपना पहला लेख सन् 1816 में प्रकाशित कराया। वह लेख टस्कैनी से आए कास्टिक लाइम के संबंध में लिखा गया था। उसे डेवी को मांट्रोस की डचेस ने भेजा था। यह लेख रायल इंस्टीट्यूशन की ओर से प्रकाशित होने वाले 'द क्वार्टरली जर्नल ऑफ साइंस' में प्रकाशित हुआ था। ''प्रोसिडिंग्स ऑफ रायल सोसाइटी'' पत्रिका उसी पत्रिका की उत्तराधिकारी है। जैसे–जैसे फैराडे की रसायन विज्ञान संबंधी क्षमताएं बढ़ी, वैसे–वैसे उन्हें अधिक जिम्मेदारियां दी गईं। सन् 1825 में उन्होंने गंभीर रूप से बीमार डेवी के उत्तराधिकारी के रूप में रायल इंस्टीट्यूशन की प्रयोगशाला के निर्देशन का काम संभाला। सन् 1833 में उन्हें रसायन शास्त्र की 'कुलेरियन प्रोफसरी' मिली। यह पद विशेष रूप से उन्हीं के लिए सृजित किया गया था।

फैराडे ने भौतिक विज्ञान और रसायन शास्त्र, दोनों में अनेक प्रयोग किए। उनका शोधकार्य अत्यधिक तकनीकी प्रकृति का था। उनके आविष्कारों को संतोषजनक ढंग से समझने के लिए रसायनशास्त्र और भौतिकशास्त्र का काफी विस्तृत ज्ञान चाहिए। फैराडे की अत्यंत महत्वपूर्ण खोजों में बेंजीन विद्युत्–चुंबकीय प्रेरण, विद्युत् चुंबकीय अपघटन के नियम एवं प्रकाश का चुंबकीकरण और प्रति चुंबकीकरण है। फैराडे की उपलब्धियों पर टिप्पणी करते हुए जान टिंडल ने कहा था, ''मेरा विचार है कि उनके समग्र व्यक्तित्व को देखते हुए यह मान लिया जाएगा कि विश्व ने जितने भी प्रयोगकर्ता दार्शनिकों को देखा है, माइकेल फैराडे उनमें महानतम थे, और मैं साथ में अपनी यह राय भी जोड़ना चाहूंगा कि भावी शोधकार्य इस महान खोजी के श्रम की महत्ता को धुंधला करने या घटाने के बजाय और बढ़ाएंगे तथा महिमामंडित करेंगे।''

फ्रेडरिक हेमरिक अलेक्जेंडर हमबोल्ड्ट

फैराडे के शुरुआती काम उनके रासायनिक शोधकार्यों के लिए उल्लेखनीय हैं। उनकी एक मात्र मौलिक पुस्तक ''केमिकल मैनिपुलेशन'' सन् 1827 में प्रकाशित हुई थी। उन्होंने नए रासायनिक यौगिकों का निर्माण किया। सन् 1822 में उन्होंने इस्पात का पहला अयस्क बनाया। सबसे पहले फैराडे ने ही एक गैस, क्लोरीन का तरलीकरण किया। सन् 1825 में उन्होंने प्रदीप्त गैस के सिलिंडरों में मौजूद अवशिष्ट पदार्थों को एकत्र करने के दौरान बेंजीन (C_6H_6) की खोज की। उन्होंने इस नए यौगिक को हाइड्रोजन का बाइकार्बुरेट कहा। इसका कारण यह था कि उन्होंने इसका फार्मूला C_2H माना। फैराडे ने ही पहले क्लोरोकार्बन का संश्लेषण किया। फैराडे अपने समय के सर्वश्रेष्ठ रासायनिक विश्लेषणकर्ता थे।

हालांकि फैराडे ने अपना विज्ञान का कैरियर एक रसायनज्ञ के रूप में शुरू किया, लेकिन विद्युत् और चुंबकत्व की प्रकृति में भी उन्होंने गहरी रुचि ली। सन् 1820 के दशक में इन्हें एक ही परिघटना के विभिन्न आयामों के रूप में देखा जाने लगा। उनके जीवन का प्रमुख काम विद्युत् के बारे में किए गए अनेक प्रयोगात्मक शोध कार्य थे। उनके ये शोध कार्य फिलॉसाफिकल ट्रांजेक्शन में 40 साल तक प्रकाशित होते रहे। इन लेखों में उन्होंने विद्युत्–चुंबकीय प्रेरण (सन् 1831), विद्युत अपघटन के नियम (सन् 1833), और चुंबक द्वारा ध्रुवीकृत प्रकाश के चक्रण सहित अन्य खोजों के बारे में जानकारी दी।

सन् 1820 में क्रिश्चियन ओएर्स्टेड (सन् 1777–1851) ने पहली बार विद्युत् और चुंबकत्व के बीच संबंध की खोज की। ओएर्स्टेड ने देखा कि जब चुंबकीय कुतुबनुमा को किसी ऐसे तार के पास रखा जाता है, जिसमें से विद्युत् धारा गुजर रही हो तो (कुतुबनुमा में एक छोटा सा लौह चुंबक होता है) कुतुबनुमा की सुई हमेशा तार की दाईं तरफ विचलित होती है। इस प्रयोग से यह प्रमाणित हो गया कि विद्युत् धारा कुतुबनुमा की सुई को प्रभावित करने वाला चुंबकीय बल उत्पन्न करती है।

फैराडे ने जब ओएर्स्टेड के प्रयोग के बारे में पढ़ा तो वैज्ञानिक समुदाय के अन्य सदस्यों की तरह वह भी उत्तेजना से भर गए और उन्होंने खुद भी इस संबंध में अनुसंधान करने का निर्णय किया। सितंबर 1821 में फैराडे ने विद्युत् चुंबकीय चक्रण का प्रदर्शन किया। उन्होंने दिखाया कि किसी तार में विद्युत धारा प्रवाहित कर उसे एक स्थिर चुंबक के चारों ओर घुमाया जा सकता है। यह विद्युत मोटर का पहला पुरातन रूप था। फैराडे के इस प्रयोग के 60 साल बाद जर्मनी, ब्रिटेन और अमरीका में बिजली की ट्रेनें दौड़ रही थीं।

जार्ज लिओपोल्ड क्रेटीन फ्रेडरीक डेगोबर्ट कुविअर

दुर्भाग्य से इस प्रयोग ने फैराडे और उनके संरक्षक डेवी के बीच दरार पैदा कर दी और यह कभी नहीं भर सकी। डेवी का मानना था कि फैराडे ने उनके और विलियम हाइड वाल्सटन (सन 1766–1828) के बीच हुई एक चर्चा को सुन लिया था। फैराडे ने स्वीकार किया कि संभव है कि उनको अपने प्रयोग की शुरुआती प्रेरणा उस चर्चा को सुन कर मिली हो, लेकिन उनके उपकरण पूरी तरह भिन्न थे और उनके प्रयोग से उत्पन्न प्रभाव वाल्टसन द्वारा अनुमानित प्रभाव से बिल्कुल भिन्न था। इतिहास ने फैराडे के प्रयोग की मौलिकता पर मुहर लगा दी।

विद्युत्–चुंबकीय चक्रण की खोज करने के बाद फैराडे चुंबकत्व को विद्युत् में बदलना चाहते थे। यह ओएर्स्टेड के प्रयोग से बिल्कुल उल्टी बात थी। उसके प्रयोग में विद्युत् को चुंबकत्व में बदला गया था। सन् 1831 में फैराडे ने देखा कि जब एक चुंबक तार पर से गुजारा गया या उसे तार की कुंडली के आधार में घुमाया गया, तो तार में विद्युत् धारा उत्पन्न हुई। यह खोज विद्युत जेनेरेटर या डायनमो के निर्माण का आधार बन गई। इन यंत्रों में तार की कुंडली पर चुंबक तेजी से घुमते हैं। फैराडे ने पाया कि वह यांत्रिक गति और चुंबकत्व के संयोग से बिजली पैदा कर सकते हैं। उन्होंने जब चुंबक के ऊपर तार की कुंडली को घुमाया तो तार में विद्युत् धारा को उपस्थित पाया पर जब उन्होंने तार की कुंडली में चुंबक को स्थिर रखा तो कुंडली में विद्युत् धारा उत्पन्न नहीं हुई। विद्युत–चुंबकीय प्रेरणा अथवा

विद्युत् जेनेरेटर या डायनमो का यही बुनियादी सिद्धांत था। इस विलक्षण विचार को एक अमेरिकी भौतिकविद् जोसेफ हेनरी ने प्रयोग के माध्यम से दर्शाया। लेकिन उसने अपने निष्कर्षों को कभी प्रकाशित नहीं कराया। इसके विपरीत फैराडे अपने काम में एकाग्र होकर लगे रहे और उन्हीं को इस खोज का श्रेय मिला। हेनरी ने भी फैराडे की मौलिकता को स्वीकार किया।

कहा जाता है कि तत्कालीन ब्रिटिश प्रधानमंत्री सर राबर्ट पील (सन् 1788–1855) ने डायनमो प्रभाव को देखने के बाद पूछा कि इस खोज का उपयोग क्या है। इस पर फैराडे ने उत्तर दिया, ''मैं नहीं जानता, लेकिन मैं शर्त लगा सकता हूं कि एक दिन आपकी सरकार इस पर कर लगाएगी।'' फैराडे ने अपने आविष्कार का व्यावहारिक उपयोग स्वयं विकसित करने की चेष्टा नहीं की। इसके बजाय वह पूरी तन्मयता से यह जानने में जुट गए कि विद्युत् और चुंबकत्व एक–दूसरे से कैसे संबंधित है। फैराडे ने ही दर्शाया कि विद्युत् के विभिन्न रूपों, जैसे स्थिर, वोल्टीय, जैविक और ताप–विद्युत, में कोई अंतर नहीं है।

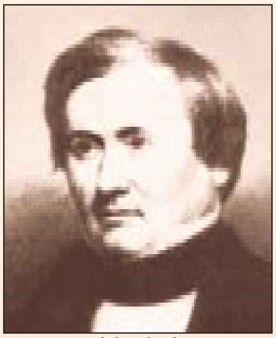

जोसेफ हेनरी

विद्युत् अपघटन पर फैराडे के काम का अत्यंत दूरगामी प्रभाव पड़ा। सन् 1934 में उन्होंने विद्युत अपघटन संबंधी अपने प्रसिद्ध सिद्धांत का सूत्रपात किया। यह सिद्धांत समस्त विद्युत् रसायन प्रौद्योगिकी और उद्योग को नियंत्रित करता है।

विद्युत्–रसायन के क्षेत्र में फैराडे के पथप्रदर्शक शोधकार्यों ने कुछ नए शब्दों के निर्माण की आवश्यकता को जन्म दिया। यह उनके कार्यों का वर्णन करने के लिए आवश्यक था। अपने मित्र ह्वेवेल की मदद से फैराडे ने अनेक ऐसे शब्दों का निर्माण किया जिनका आमतौर पर आज भी प्रयोग किया जाता है। यूनानी भाषा में 'ऊपर' के लिए 'एना' शब्द का प्रयोग किया जाता है और सड़क के लिए होंडोस शब्द का इस्तेमाल होता है। इन दोनों शब्दों से फैराडे ने एनोड शब्द का निर्माण किया। इसी तरह यूनानी के शब्द काटा, जिसका अर्थ 'नीचे' होता है, और आपन शब्द जिसका मतलब यूनानी में घुमक्कड़ होता है, इन दोनों शब्दों को मिला कर उन्होंने कैथोड शब्द का निर्माण किया। उसी क्रम में एनायन और कैटायन जेसे शब्दों का निर्माण हुआ। उन्होंने इलेक्ट्रोलाइट और इलेक्ट्रोड शब्दों का भी निर्माण किया।

जेम्स प्रेस्काट जूले

फैराडे ने ही चुंबकीय और विद्युत बलों को व्याख्यायित करने के लिए 'क्षेत्र' की धारणा का विकास किया। अपने बचपन से ही फैराडे को प्राकृतिक बलों और परिघटनाओं के बीच आंतरिक संबंध और एकत्व में गहरा विश्वास था। उनका कहना था, ''प्रकृति संबंधी ज्ञान से प्रेम करने वाले अन्य लोगों की ही तरह काफी समय से मेरी राय थी, बल्कि एक तरह से विश्वास था कि प्रकृति की शक्तियां जिन विभिन्न रूपों में प्रकट होती हैं, वो प्रत्यक्ष तौर पर एक दूसरे से और परस्पर निर्भर हैं, तथा उन्हें एक रूप से दूसरे रूप में परिवर्तित किया जा सकता है एवं कार्य करते समय इनमें बल की समतुल्यताएं निहित होती हैं।'' फैराडे का विचार था कि उनके क्षेत्र सिद्धांत और चुंबकत्व, विद्युत् तथा गति के अंतर्सबंधों से संबंधित उनकी खोज ने प्राकृतिक बलों और परिघटनाओं के एकत्व के उनके विचार को और पुष्ट किया है। प्रकृति में मूलभूत एकता से संबंधित उनके विचार बाद में जेम्स प्रेस्काट जूले (सन् 1818–89), जोसेफ जान थाम्सन (सन् 1856–1940), हरमन लुडविग फर्डिनैंड वॉन हेल्मॉल्टज (सन् 1821–94), रुडोल्फ जुलियस इमैनुएल क्लासियस (सन् 1822–88) और जेम्स क्लार्क मैक्सवेल (सन् 1831–97) के कामों से अत्यधिक प्रभावित हुए।

अपने शोध कार्य की तकनीकी प्रकृति के बावजूद फैराडे में आम श्रोताओं के समक्ष विज्ञान को एक कुशल व्याख्याकार के रूप में प्रस्तुत करने की क्षमता थी। उन्होंने रायल इंस्टीट्यूशन के तत्वावधान में शुक्रवार की संध्या को दिए जाने वाले व्याख्यानों की अनेक श्रृंखलाओं का आयोजन किया। शुक्रवार की संध्या को आयोजित की जाने वाली इन परिचर्चाओं ने एक संस्था की स्थिति हासिल कर ली। इन परिचर्चाओं में आम श्रोताओं को विज्ञान में हो रहे नवीनतम विकास की जानकारी दी जाती थी। श्रोताओं को परिचर्चा में भाग लेने के लिए शुल्क देना पड़ता था। इन परिचर्चाओं में फैराडे अक्सर वक्ता होते थे। सन् 1825 से सन् 1862 (फैराडे उस साल रिटायर हुए थे) के बीच फैराडे ने शुक्रवार की संध्या को सौ से अधिक व्याख्यान दिए। इन व्याख्यानों के आयोजन की परंपरा आज तक जारी है।

सन् 1826 में फैराडे ने रायल इंस्टीट्यूशन में अपनी प्रसिद्ध व्याख्यानमाला शुरू की। यह बच्चों के लिए क्रिसमस के अवसर पर दिए जाने वाले दस व्याख्यानों की शृंखला थी। फैराडे ने इस व्याख्यानमाला की 19 शृंखलाएं चलाईं। इसमें से अधिकतर व्याख्यानों के केवल नोट उपलब्ध हैं। केवल दो व्याख्यानों, जैसे कि ''द केमिकल हिस्ट्री आफ ए केंडल'' एंड ''लेक्चर्स आन वैरियस फोर्सेज ऑफ मैटर'' को शार्ट हैंड के जरिए लिपिबद्ध करके प्रकाशित किया गया। इन व्याख्यानों का शास्त्रीय महत्व है। शुक्रवार की संध्या को दिए जाने वाले भाषणों और क्रिसमस के अवसर पर दिए गए व्याख्यानों ने एक पूरी पीढ़ी को विज्ञान के चमत्कारों से अवगत कराया। फैराडे जन्मजात वक्ता नहीं थे। उन्होंने अत्यंत परिश्रम करके स्वयं को अपने समय के एक महान वक्ता के रूप में विकसित किया। यहां हम व्याख्यान कला के बारे में फैराडे के विचारों को उद्घृत कर रहे हैं : 'सोसाइटी की जो पद्धति है उसके तहत व्याख्यान से न केवल सुनने वाले का बल्कि वक्ता का भी विकास होता है। वह इस अवसर का उपयोग अपनी मानसिक शक्तियों को सक्रिय करने के लिए करता है, अगर वह ऐसा नहीं करता तो उसे ऐसा करना चाहिए, ताकि उनका उपयोग करके वह उन्हें और सशक्त बना सके एवं अगर वह अपने प्रयासों में गंभीर है तो जितना अपने श्रोताओं का भला करेगा उतना ही खुद अपना भी भला करेगा।

जोसेफ जान थाम्सन

एक वक्ता को अपने श्रोताओं के मस्तिष्क और उनके ध्यान को अपनी ओर आकर्षित करने के लिए अधिकतम प्रयास कर श्रोताओं तथा अपने बीच की समस्त बाधाएं दूर कर देनी चाहिए ताकि वे विषय के अंत तक उसके विचारों के सहयात्री बने रहें। उसे व्याख्यान के शुरू में ही उनकी रुचि जाग्रत करने का प्रयास करना चाहिए और श्रोताओं द्वारा महसूस न किए जा सकने वाले क्रमिक प्रयासों के जरिए उसे तब तक बरकरार रखना चाहिए, जब तक विषय की मांग हो..... उसे शुरू में ही एक लौ जला देनी चाहिए, इस चमक को अबाधित ढंग से अंत तक कायम रखना चाहिए।

एक वक्ता को सहज और सुव्यवस्थित, निर्भीक और निर्लिप्त लगना चाहिए। उसके विचार स्वयं अपने बारे में स्पष्ट होने चाहिए और चिंतन तथा विषय के वर्णन के लिए उसका मस्तिष्क स्पष्ट होना चाहिए। उसे मंद,

हैरमन लुडविग फर्डिनैंड वॉन

सहज और स्वाभाविक गति से अपने शरीर की मुद्राओं में बदलाव लाते रहना चाहिए ताकि औपचारिकता और एकरसता के वातावरण को दूर किया जा सके, अन्यथा ऐसा कर पाना संभव नहीं हो पाता। वक्ता के लिए सबसे महत्वपूर्ण अपेक्षित गुण होता है अच्छी व्याख्यान शैली, वैसे सही मायने में यह सर्वाधिक महत्वपूर्ण गुण नहीं है, लेकिन सच्चे दार्शनिकों को विज्ञान और प्रकृति के हर रूप–रंग में भले ही अपार आकर्षण दिखता हो, पर दुख के साथ कहना पड़ता है कि अगर रास्ता फूलों भरा न हों, तो मानव समाज का आम हिस्सा एक घंटे के लिए भी हमारा साथ नहीं दे सकता।

''किसी भी वाक्यांश को कभी मत दुहराओ।''

''संशोधन करने के लिए कभी वापस मत लौटो''

''अगर कोई शब्द न सूझ रहा हो तो च–च–च या ऐह–ऐह–ऐह–ऐह करने के बजाए एक पल इंतजार करो, वह शब्द खुद ब खुद सूझ जाएगा, और इस तरह बुरी आदतें छूट जाएंगी तथा जल्दी ही प्रवाह आ जाएगा।''

''जहां तक वक्ता के हाव–भाव का प्रश्न है तो यह अपेक्षित है कि उसमें कुछ सक्रियता होना चाहिए, हालांकि यहां पर उसका वह महत्व नहीं है जो भाषण कला की अन्य विधाओं में होता है, मैं व्याख्यान शैली के किसी ऐसे रूप को नहीं जानता जिसमें गति की कम आवश्यकता पड़ती हो, मैं किसी भी हाल में नहीं चाहूंगा कि वक्ता मेज से चिपका रहे, या फर्श में जड़ा हो। उसे हर लिहाज से एक पृथक अस्तित्व लगना चाहिए और अपने आस–पास की चीजों से अलग नजर आना चाहिए। उसमें उन चीजों से कुछ भिन्न गति होनी चाहिए।''

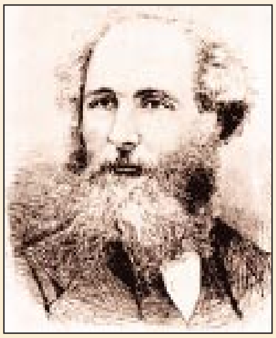
रुडोल्फ जुलियस इमैनुएल क्लासियस

पूरे जीवन भर फैराडे रायल इंस्टीट्यूशन में काम करते रहे। वह स्वयं को इस संस्था का ऋणी मानते थे। दरअसल फैराडे के बिना रायल इंस्टीट्यूशन का अस्तित्व कायम नहीं रह पाता। उन्होंने इंस्टीट्यूशन का अस्तित्व बचाए रखने के लिए धन जुटाने का हर संभव प्रयास किया। संस्था के प्रति कृतज्ञता–बोध के कारण उन्होंने सन् 1827 में लंदन विश्वविद्यालय के रसायनशास्त्र विभाग का अध्यक्ष बनने का प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया। प्रस्ताव को अस्वीकार करते हुए उन्होंने लिखा :

''मैं समझता हूं कि कर्त्तव्य और कृतज्ञता बोध का यह तकाजा है कि मैं रायल इंस्टीट्यूशन की भलाई के लिए उसे मजबूती से जमाने के मौजूदा प्रयासों को सफल बनाने के उद्देश्य से अपनी ओर से हर संभव प्रयास करूं। यह इंस्टीट्शन 14 सालों से मेरे लिए ज्ञान और आनंद का स्रोत रहा है। हालांकि मैं इसके लिए फिलहाल जो कुछ करने का प्रयास कर रहा हूं, उसके लिए मुझे वेतन नहीं मिलता पर मुझे इसके अधिकारियों और सदस्यों की सदभावनाओं और सदइच्छा हासिल है और मेरी जो भी आवश्यकताएं हैं, अथवा यह मुझे जो भी सुविधाएं प्रदान कर सकता है, वे मुझे उपलब्ध हैं। इसके अलावा मुझे पिछले वर्षों में अपने वैज्ञानिक जीवन के दौरान इससे मिला संरक्षण भी याद है....... मैं पहले ही शीशे के उपकरणों में श्रमसाध्य और खर्चीले प्रयोगों की शृंखलाओं के प्रति समर्पित हो चुका हूं। (और इसका कारण काफी हद तक इंस्टीट्यूशन की बेहतरी है)।

केवल फैराडे जैसा आदमी ही अपने जीवन में ऐसा फैसला ले सकता था। फैराडे ने सन् 1813 में रायल इंस्टीट्यूशन में काम करना शुरू किया। उन्होंने शुक्रवार की संध्या को दिया जाने वाला अपना अंतिम व्याख्यान 20 जून 1862 को दिया। रायल इंस्टीट्यूशन के साथ उनका संबंध अंतिम तौर पर सन् 1865 में समाप्त हो गया। सन् 1813 से सन् 1862 के बीच रायल इंस्टीट्यूशन ही उनका घर भी था। सन् 1862 में वह प्रिंस अलबर्ट के सुझाव पर महारानी विक्टोरिया द्वारा उन्हें दिए गए हांप्टन कोर्ट स्थित मकान में चले गए। कहा जाता है कि फैराडे के पास इतने पैसे नहीं थे कि वह मरम्मत करवा कर उस मकान को रहने लायक बनवा सकें। महारानी को जब यह जानकारी मिली तो उन्होंने मकान के नवीनीकरण के लिए भी पैसे दिए।

25 अगस्त 1867 को फैराडे की मृत्यु हो गई। उनकी इच्छा के अनुसार ही उन्हें शांतिपूर्ण ढंग से हाईगेट कब्रिस्तान में दफना दिया गया। उनकी कब्र कार्ल मार्क्स की कब्र से अधिक दूर नहीं है। फैराडे की कब्र पर लगे पत्थर पर केवल इतना दर्ज है–

माइकेल फैराडे
जन्म 22 सितंबर 1791
मृत्यु 25 अगस्त 1867

जेम्स क्लर्क मैक्सवेल

उनकी दूसरी जन्मसदी (सन् 1991) के अवसर पर फैराडे की स्मृति में उनके देश में एक डाक टिकट और साल के प्रथम दिन पर एक विशेष लिफाफा जारी किया गया। बीस पाउंड के नोट पर विलियम शेक्सपियर के चित्र के स्थान पर माइकेल फैराडे का हस्ताक्षर और चित्र मुद्रित किए गए। वेस्टमिनिस्टर एबे में उनकी स्मृति में एक विशेष अनुष्ठान का आयोजन किया गया।

हम इस लेख का समापन फैराडे के इस कथन से करना चाहेंगे, ''एक दार्शनिक (यहां वैज्ञानिक से आशय है) को ऐसा व्यक्ति होना चाहिए जो हर सुझाव को सुनने के लिए उत्सुक हो लेकिन निर्णय स्वयं ले। वह दिखाई देने वाली चीजों से पूर्वाग्रहित न हो, किसी परिकल्पना का पक्ष न ले, किसी विचार पद्धति का अनुयायी न हो, और सिद्धांत के क्षेत्र में उसका कोई स्वामी न हो, उसे व्यक्तियों का नहीं, पदार्थों का सम्मान करना चाहिए। उसका प्रथम लक्ष्य सत्य होना चाहिए। अगर इन गुणों के साथ उद्यम का गुण भी जुड़ जाए तो वह निश्चित रूप से प्रकृति रूपी मंदिर के आवरण के अंदर प्रवेश करने की आशा कर सकता है।''

फैराडे से संबंधित पुस्तकें तथा उनकी कृतियां

–**अगासी, जोसेफ,** फैराडे ऐज ए नेचुरल फिलासफर युनिवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रेस, शिकागो, सन् 1970

–**क्रूक्स** (संपादक) ए कोर्स ऑफ सिक्स लेक्चर्स ऑन द केमिकल हिस्ट्री ऑफ ए कैंडल : विज्ञान प्रसार ने इस पुस्तक का (अंग्रेजी, मराठी और तमिल सहित) पुनर्मुद्रण किया है – 'प्रकाश बत्ती का रासायनिक इतिहास' : मूल्य : 35 रुपए

–**गुडिंग, डेविड** एंड **जेम्स फ्रैंक ए.जे.एल.** (संपादक), फैराडे रिडिस्कवर्ड, माइकेल फैराडे के जीवन एवं कृतित्व पर निबंध (1791–1867) : स्टाक्टन प्रेस, लंदन, सन् 1985

–**जोंस, बैंस,** द लाइफ एंड लेटर्स ऑफ फैराडे (दो खंड), लांगमैंस, ग्रीन, लंदन, सन् 1870

–**रैंडेल, विल्फ्रिड एल.** माइकेल फैराडे, पैर्सस, लंदन, सन् 1924

–**टिंडल, जे.** फैराडे ऐज ए डिस्कवरर (चौथा संस्करण), लांगमैंस, ग्रीन, लंदन, 1868

–**विलियम, पीअर्स एल.,** द ओरिजिन ऑफ फील्ड थ्योरी, रैंडम हाउस, न्यूयार्क, सन् 1966

–**विलियम्स, पीयर्स एल.,** माइकेल फैराडे, बेसिक बुक्स, न्यूयार्क, सन् 1967

• • •

ऐन्थ्रेक्स बेसिलस की खोज

❒ प्रदीप कुमार मुखर्जी

'ईश्वर के अभिशाप' के खिलाफ जंग

राबर्ट कॉख, जो क्षय रोग के दंडाणुओं (बेसिलस) की पहचान करने एवं उन्हें पृथक करने के लिए प्रसिद्ध हैं, को ऐन्थ्रैक्स रोग के दंडाणु जिसे **बेसिलस ऐन्थ्रैसिस** कहा जाता है, की पहचान करने का श्रेय भी दिया जाता है। उल्लेखनीय है कि अफगानिस्तान पर अमेरिकी हमलों के पिछले दिनों की घटनाओं में ऐन्थ्रैक्स रोग जनसाधारण के बीच काफी चर्चा में था।

निरीक्षण खुर्दबीन की 'आंख' द्वारा

जर्मनी में 1842 में जन्मे राबर्ट कॉख ने गाटिंगेन विश्वविद्यालय से चिकित्सा शास्त्र में स्नातक की उपाधि ली। उनके जवानी के दिनों का शौक एवं जुनून विश्व भ्रमण द्वारा नई जगहों को देखना एवं नए लोगों से मिलना था। रोमांचकारी और यायावरी के जीवन से उन्हें विशेष लगाव था। उनके लिए यह एक सपने जैसा ही था। लेकिन सवाल था कि अपने इस सपने को वह पूरा कैसे करते? वह अपने आप से कहा करते, ''किसी जलयान में डाक्टर की नौकरी कर मैं सात समुद्रों की यात्रा करूंगा तथा संसार के सातों आश्चर्यों को स्वयं अपनी आंखों से देखने का लुत्फ़ उठाऊंगा।'' लेकिन कॉख का यह सपना भला इतनी जल्दी कहां पूरा होने वाला था!

रॉबर्ट कॉख

सन् 1886 में हैमबर्ग के एक पागलखाने में कॉख एक चिकित्सक के रूप में नियुक्त हो गए। इस जीते–जागते नरक की चहारदीवारियों में कैद होकर तथा कुछ आधे और कुछ नीम पागलों की चीख–पुकार और रोने–धोने के दहशत भरे माहौल में उन्हें दिन–रात घिरे रहना पड़ता। ऐसे में कोई आश्चर्य नहीं था कि लुई पाश्चर की हैरत में डालने वाली सूक्ष्म जीवों संबंधी खोजों की खबरें कॉख तक नहीं पहुंच पाईं। इसी दौरान उनकी मुलाकात एम्मी फ्राट्ज से हुई और एक लम्बे मेल–मिलाप के सिलसिले के बाद दोनों दाम्पत्य सूत्र में बंध गए।

एम्मी से विवाह के बाद कॉख प्रशिया के नीरस परिवेश वाले गांवों में चिकित्सक के रूप में कार्यरत हो गए। सन् 1870 में पूर्वी प्रशिया के एक छोटे–से वाल्स्टीन नामक गांव में कॉख चले आए। कॉख के नीरसता भरे दैनंदिन जीवन से उन्हें छुटकारा दिलाने के लिए उनकी पत्नी ने एक खुर्दबीन खरीद कर उन्हें भेंट कर दी।

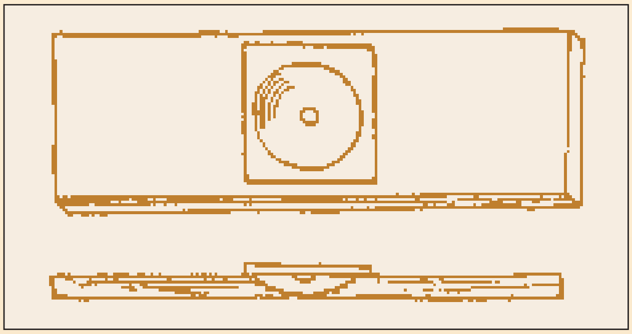

हैंगिंग ड्रॉप

सूक्ष्म जीवों की दुनिया में होने वाली अनोखी और हैरतअंगेज कारगुजारियों को इस खुर्दबीन द्वारा देखने और उनका अध्ययन करने का सुनहरा मौका कॉख को मिला। उन्हें सिखलाने या बताने वाला कोई नहीं था। अपनी विद्या और बुद्धि के अलावा बस खुर्दबीन की भरोसेमंद 'आंख' ही उनका एकमात्र सहारा थी। अपने अथक परिश्रम द्वारा कॉख ने सूक्ष्म जीवों का गहराई से अध्ययन किया। उन्हें न तो दिन को चैन था और न ही रात को आराम। बस हर घड़ी सूक्ष्म जीवों की दुनिया में ही वह खोए रहते।

'ईश्वर का अभिशाप'

इस बीच चिंतित और भयभीत किसानों का कॉख के यहां तांता लगना शुरू हो गया था। कॉख के पास आकर वे अपने किस्से सुनाते कि किस तरह 'ईश्वर के अभिशाप' का कोप उनकी भेड़ों और मवेशियों पर बरस रहा था। वे बताते कि किस तरह जीवन के स्फुरण से भरपूर कोई स्वस्थ भेड़ का बच्चा अचानक बीमार हो जाता और फिर अपने झुंड से कट कर निर्बल–असहाय होकर पस्त हो जाता। फिर वह बेचारा कभी न उठ पाता। लेकिन किसान के लिए तो यह पहला झटका था। एकाध भेड़ की बात नहीं थी। यहां तो सैकड़ों की तादाद में भेड़ और मवेशी काल का निवाला बनते जाते थे। कभी–कदा तो किसान स्वयं बीमारी की गिरफ्त में आ जाता। उसके शरीर पर फोड़े उग आते तथा उसे यमलोक पहुंचाने का रहा–सहा काम बुखार पूरा कर देता। बेचारे मृत किसान का खून एकदम गहरा काला पड़ जाता।

कांच की स्लाइडों पर बीमारी से मारे गए मवेशियों के खून की बूंदों को डाल कर कॉख खुर्दबीन से उनका बारीकी से निरीक्षण करने में जुटे और इस तरह एक के बाद एक स्लाइड निरीक्षण के लिए खुर्दबीन के नीचे आती रही। हरापन लिए कुछ नन्हीं–नन्हीं गोलिकाओं (ग्लोब्यूल) के अलावा कॉख की आंखों को छड़ सदृश कुछ अजीबोगरीब संरचनाओं ने भी आकर्षित किया। छोटी–बड़ी सभी आकार की ये छड़नुमा संरचनाएं आपस में मिल कर बारीक–बारीक धागों की रचना कर रही थीं। इतने बारीक थे ये धागे कि बारीक–से–बारीक रेशम का धागा भी उनके आगे पानी भरते नजर आए।

अपने निरीक्षण कार्य को तनिक विराम देकर कॉख सोचते, ''कहीं ये छड़ें ही तो ऐन्थ्रैक्स के रोगाणु (जर्म) नहीं हैं?'' स्वस्थ पशुओं में ये छड़ें ऐन्थ्रैक्स का संक्रमण फैलाने में सक्षम हो पाते हैं या नहीं यह देखने के लिए उन्होंने इन छड़ों को उनकी रुधिर धारा में प्रवेश कराने का निर्णय लिया।

लेकिन कॉख की औकात भेड़ों और गायों को खरीदने की नहीं थी। इसलिए चूहों पर ही उन्हें सब्र करना पड़ा। लेकिन प्रयोग के लिए उनके पास सिरिंज तक नहीं थी। इसलिए लकड़ी को बारीक छील कर उनसे ही सिरिंज का काम लेने का उन्होंने फैसला किया। लकड़ी की इन सलाखों को अच्छी तरह धोकर एवं संक्रमणमुक्त करने के बाद उन्हें ऐन्थ्रैक्स से मरे पशु के शरीर के अंदर उन्होंने प्रवेश करा दिया। तदोपरांत एक स्वस्थ छटपटाते चूहे की पूंछ के नीचे की खाल में चीरा लगाकर लकड़ी की इन पतली सलाखों को उन्होंने उसके अंदर घुसा दिया। कॉख ने उस चूहे को अगली सुबह मरा हुआ पाया। उसका शरीर एकदम स्याह पड़ चुका था।

मरे हुए चूहे को चीर–फाड़ करने की भेज पर लिटा कर कॉख ने शल्यक्रिया द्वारा उसके उदर को खोला। उस चूहे की प्लीहा उन्हें काली एवं

बढ़ी हुई नजर आई। मृत चूहे के रुधिर में उसी तरह की छड़ों और बारीक धागों की उन्होंने भरमार देखी जिस तरह की खुर्दबीन द्वारा वह पहले भी देख चुके थे। लकड़ी की सलाखों द्वारा तो उन्होंने मुश्किल से सौ के करीब रोगाणुओं का प्रवेश ही उस चूहे के अंदर कराया होगा। लेकिन अब तो उनकी तादाद लाखों–करोड़ों में थी। यह देखकर कॉख गहन आश्चर्य में डूब गए। लेकिन एक बात का संकेत तो स्पष्ट रूप से कॉख को मिल गया था कि वे छड़ें न केवल ऐन्थ्रैक्स का वाहक थीं बल्कि अकल्पनीय दर से शरीर के अंदर वे अपनी फौज बढ़ाने में भी सक्षम थीं।

अब कॉख के सामने नई समस्या उत्पन्न हुई। वह परेशान होकर सोचते, ''मुझे यह देखना होगा कि वे किस तेजी से अपनी संख्या वृद्धि करते हैं। लेकिन अपनी खुर्दबीन से तो मैं किसी जीवित चूहे के शरीर के अंदर नहीं झांक सकता। फिर कैसे हल निकालूं मैं इस पहेली का?''

ऐन्थ्रैक्स बेसिली

'हैंगिंग ड्राप'

कॉख को यह समस्या सुलझती नजर नहीं आई। कई दिन इसी तरह बीत गए। लेकिन उनके चुस्त–चतुर दिमाग ने आखिर इसका हल ढूढ़ निकाला। कांच की एक साफ स्लाइड लेकर जलती हुई लौ के ऊपर उसे घुमा कर उन्होंने उसे संक्रमणयुक्त किया। फिर किसी ऐन्थ्रैक्स के मरीज की प्लीहा से लिए गए एक बारीक ऊतक तथा एक सद्यः बलि चढ़ाए गए सांड की आंख से स्रावित तरल द्रव्य की कुछ बूंदें लेकर कॉख ने उन्हें इस स्लाइड के ऊपर डाला। इस स्लाइड को उस पर पड़ी सामग्री समेत वेस्लीन की मदद से कॉख ने फिर एक मोटी कांच की पट्टिका के साथ चिपका दिया। इसके लिए उस पट्टिका के बीच में एक खोखली जगह पहले ही बना ली गई थी।

इस साधारण–सी लगने वाली उक्ति, जिसे कॉख ने 'हैंगिंग ड्राप' का नाम दिया था, को खुर्दबीन के नीचे रख कर उन्होंने फिर आग्रहपूर्वक उसका निरीक्षण आरंभ किया। कॉख को बड़े धीरज से काम लेना पड़ा। लेकिन अंततः उनका यह धैर्य काम आया और अकल्पनीय दर से अपनी संख्या वृद्धि करती लाखों की तादाद में छड़ें उन्हें खुर्दबीन द्वारा नजर आईं।

'हैंगिंग ड्राप' प्रयोग को कॉख ने रोजाना एक हफ्ते तक दोहराया। हर रोज पिछले दिन के 'हैंगिंग ड्राप' को लेकर उसमें सांड की आंख से निकले ताजे तरल द्रव्य को वह मिलाते। खुर्दबीन के जरिए बेसिलस को अरबों गुना अपनी संख्या वृद्धि करते कॉख रोजाना देखते।

बैक्टीरिया और फंफूदी उगाते हुए कॉख का व्यंग्य चित्र

एक हफ्ते बाद चूहे की प्लीहा से प्राप्त बेसिलस, जिसे कॉख ने अपने प्रथम 'हैंगिंग ड्राप' में इस्तेमाल किया था, की आठवीं पीढ़ी कॉख के पास हो गई थी। इसकी एक बूंद को लकड़ी की नई सलाखों में लेकर कॉख ने उनकी मदद से एक स्वस्थ चूहे को संक्रमित किया। दोबारा से बेसिली ने चूहे के शरीर के अंदर अपनी फौज वृद्धि की जिससे चूहे की मौत हो गई।

गिनीपिग, खरगोश और भेड़ों पर भी कॉख ने इसके बाद अपने प्रयोग को फिर अनेक बार दोहराया। हालांकि शक की कोई गुंजाइश नहीं थी लेकिन अभी भी काम खत्म नहीं हुआ था। यह पता लगाना अब भी बाकी था कि रोगी से स्वस्थ पशु तक संक्रमण का सफर आखिर किस तरह से तय होता है?

जीत का सेहरा

संयोग से ही कॉख पर इसका रहस्योद्घाटन हुआ। एक दिन एक ऐसे 'हैंगिंग ड्राप' ने उनका ध्यान आकर्षित किया जो एक चूहे के शरीर की गर्मी के संसर्ग में चौबीस घंटों के लिए किसी तरह से पड़ा रह गया था। उन्होंने गौर किया कि छड़ और धागे सदृश संरचनाएं चमकते नन्हें मनकों की शक्ल में तब्दील हो गए थे।

इस 'हैंगिंग ड्राप' को सुखा कर उन्होंने उसे एक आले के अंदर सुरक्षित रख छोड़ा। एक महीने बाद कॉख को वे सूखे मनके पूर्ववत् ही चमकते दिखाई दिए। सांड की आंख से स्रावित ताजे तरल द्रव्य को इन सूखे मनकों पर उन्होंने डाला। परिणाम देखकर कॉख दंग रह गए। सब के सब मनके ऐन्थ्रैक्स बेसिलस में बदल गए थे। ''तो इस तरह वे अपने आपको जीवित रखते हैं?'' कॉख ने सोचा। हालांकि बेसिली सूख चुके थे पर इससे पहले वे मनकों और 'स्पोर' के रूप में बदल गए थे। और स्पोरों के बनने के साथ ही बेसिली भी अमर हो गए थे। किसी भी स्वस्थ गाय या भेड़ की रुधिर धारा में प्रवेश करके वे दोबारा से जीवित और सक्रिय बेसिली के रूप में बदल सकते हैं।

इस तरह 'ईश्वर के अभिशाप' के खिलाफ चल रही जंग आखिरकार जीत ली गई। जीत का सेहरा कॉख के ही सिर बंधा और रातोंरात वह प्रसिद्धि के शिखर पर जा चढ़े। सभी यूरोपीय देशों के विज्ञान जर्नलों में उनका नाम सुर्खियों से छपा। सूक्ष्म जीव ही मृत्युदाई बीमारियों के अदृश्य वाहक होते हैं इस तथ्य को बिना किसी शक और शुबहा के स्थापित करने में कॉख को कामयाबी मिली थी। उन्होंने यह भी सिद्ध किया था कि एक सूक्ष्म जीव भी ऐसी महामारी शुरू कर सकता है जो देखते–देखते सैकड़ों–हजारों मवेशियों का सफाया कर सकता है।

उनके सम्मान में प्रोफेसर फर्डीनेंड कुहन, जो उस समय के सुप्रसिद्ध वनस्पतिविद् थे, द्वारा आयोजित एक विशेष बैठक में भाग लेने के लिए कॉख गए। लेकिन सम्मानित व्यक्तियों एवं वैज्ञानिकों का हुजूम जो उन्हें सुनने के लिए इकट्ठा हुआ था के सम्मुख कॉख ने कोई औपचारिक भाषण नहीं दिया। केवल अपने प्रयोगों को उनके सामने प्रस्तुत करने का काम ही कॉख ने किया। व्यावहारिक कॉख, बोलते समय जिनकी जुबान में थोड़ी लड़खडाहट आ जाती थी, ने विद्वजनों के सामने अपने निष्कर्ष को इन शब्दों के साथ प्रस्तुत किया : ''ऐन्थ्रैक्स रोग को समूल नष्ट कर पाना संभव है बशर्ते कि कुछ प्राथमिक सावधानियों का पालन किया जाए। इस बीमारी से मरे हर पशु को तुरंत ठिकाने लगा देना चाहिए। अगर उन्हें जला पाना संभव नहीं तो ऐसी हालत में जमीन के अंदर गहरा गड्ढा खोद कर उन्हें दबा देना चाहिए। जमीन की इस गहराई में तापमान इतना कम होता है कि बेसिली सुदीर्घ अवधि तक जीवित रह पाने वाले सख्त जान स्पोरों के रूप में तब्दील नहीं हो पाते। अपने मवेशियों को इस रोग के भयानक खतरे से हम बचा सकते हैं। लेकिन इसके लिए उन पर जोंकें छोड़ना या टोने–टोटके युक्त तथाकथित दवाइयां उनको खिलाने की कतई सिफारिश नहीं की जा सकती। इस बेसिलस की कौम का ही सफाया कर देने का संकल्प हम करें।''

• • •

राष्ट्रीय साफ्टवेयर प्रौद्योगिकी केन्द्र

प्रासंगिक अनुसंधानों को विशेष महत्व

❒ दिलीप एम. सालवी

'आईटी' (इंफॉर्मेशन टेक्नोलॉजी, सूचना प्रौद्योगिकी) की जब बात होती है तब सी–डैक, सी–डॉट, नीट, सीएमसी जैसे बहुत से प्रतिष्ठित संस्थानों एवं संगठनों के नाम मस्तिष्क पटल पर उभर आते हैं, लेकिन देश में कम्प्यूटर सॉफ्टवेयर के क्षेत्र में संलग्न अग्रणी संगठनों में से एक होने के बावजूद मुम्बई स्थित राष्ट्रीय सॉफ्टवेयर प्रौद्योगिकी केन्द्र (एनसीएसटी) का ध्यान किसी को नहीं आता। कारण सामान्य है। इस केन्द्र ने विभिन्न माध्यमों द्वारा अपनी गतिविधियों का प्रचार करने की कभी कोशिश नहीं की है। यह सॉफ्टवेयर पर विशेष बल देते हुए कम्प्यूटर से संबंधित सभी क्षेत्रों में अपनी अधिसंरचना, तकनीक, गतिविधियों और सुविधाओं को शनैः–शनैः, सतत् और शांत रूप से निर्मित करता रहा है। इस प्रक्रिया के दौरान इसने बहुत से मुकाम हासिल किये हैं, लेकिन इसकी जानकारी मात्र इस क्षेत्र के प्रोफेसनल्स (व्यावसायिकों) को ही है। इसके गोरे–चिट्टे, लम्बे व चौड़े कंधों वाले सह–निदेशक डॉ. एस.पी. मुदूर मुस्कुराते हुए कहते हैं, "हमने कोई सुपरकम्प्यूटिंग आर्कीटेक्चर नहीं बनाया है, किन्तु हमने डाटाबेस, नेटवर्क व इंटरनेट, ज्ञान आधारित सिस्टम, सॉफ्टवेयर इंजीनियरिंग, ग्राफिक्स एवं मल्टीमीडिया और शैक्षणिक प्रौद्योगिकी जैसे सावधानीपूर्वक चुने गये बहुत से क्षेत्रों में उल्लेखनीय काम किया है। हमारी महत्वाकांक्षा है कि हमारा यह केन्द्र इन क्षेत्रों में विश्व स्तर का बने।"

साधारण किन्तु भव्य रूप से डिजाइन किया गया इस केन्द्र का दो–मंजिला सफेद भवन मुम्बई के सुप्रसिद्ध सम्भ्रांत जुहू कॉलोनी के बाजार क्षेत्र के एकदम बीच में स्थित है। जुहू अपने खुबसूरत समुद्री किनारे (बीच) के लिए जाना जाता है। वास्तव में, कोई भी यह कल्पना नहीं कर सकता कि राष्ट्रीय महत्व का एक कम्प्यूटर केन्द्र रेस्तरांओं, मधुशालाओं, मिठाई और कपड़े की दुकानों के सामने स्थित होगा। लेकिन कोई जैसे ही केन्द्र के भीतर प्रवेश करता है, वहां का पूरा माहौल शांति व स्वच्छता में बदल जाता है। इसके निर्माण के पीछे के इतिहास पर प्रकाश डालते हुए केन्द्र के दाढ़ीवाले वरिष्ठ प्रशासनिक प्रमुख के. चंद्रन कहते हैं, "यह केन्द्र मुम्बई स्थित टाटा मौलिक शोध संस्थान में चल रही संयुक्त राष्ट्र की एक दसवर्षीय परियोजना से उत्पन्न हुआ है। जब यह परियोजना पूरी हुई तब इससे सम्बद्ध लगभग 40 कम्प्यूटर वैज्ञानिकों ने कम्प्यूटर सॉफ्टवेयर की बढ़ती आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए 1985 में इस केन्द्र की स्थापना की।" कम्प्यूटर सॉफ्टवेयर के क्षेत्र में आज एक प्रमुख नाम डॉ. एस. रमानी इस केन्द्र के प्रथम निदेशक बने थे।

राष्ट्रीय सॉफ्टवेयर प्रौद्योगिकी केन्द्र का एक दृश्य

डॉ. मुदूर ने इसमें आगे जोड़ते हुए कहा कि "हम तीन– डॉ. रमानी, वर्तमान निदेशक डॉ. पी. सदानन्द और मैंने केन्द्र की प्रारंभिक कार्ययोजना बनायी। शुरुआत से ही हमारा मत काफी स्पष्ट था कि हम देश की जरूरतों के मुताबिक प्रासंगिक अनुसंधान संचालित करेंगे, इसे एक राजस्व उत्पादक अनुसंधान केन्द्र बनायेंगे और साथ ही साथ अग्रणी अनुसंधान के क्षेत्र में उत्कृष्टता लाने की टीआईएफआर की संस्कृति को बनाये रखेंगे।" प्रारंभ में केन्द्र ने अपने खर्च का सिर्फ 50 प्रतिशत सरकार से लेने का प्रस्ताव रखा। हालांकि, साल–दर–साल यह अपने बढ़ते खर्चों के 75 प्रतिशत से भी अधिक प्राप्त करने में सक्षम होता गया, जो कि इस केन्द्र जैसी एक स्वायत्त सोसाइटी और एक सार्वजनिक न्यास के लिए काफी सराहनीय है।

केन्द्र ने प्रारंभ से ही तीन प्रमुख क्षेत्रों–अनुसंधान व विकास, शिक्षा व प्रशिक्षण तथा उद्योग एवं व्यवसाय को उच्च प्रौद्योगिकी समर्थन पर विशेष बल दिया है। इसने सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय की अर्नेट परियोजना में अग्रणी भूमिका अदा की है तथा भारत के प्रथम इंटरनेट गेटवे की शुरुआत और प्रबंध किया है जो आज देश में इंटरनेट पंजीकरण में एक आधिकारिक नाम हो गया है। इसने भारत की क्षेत्रीय भाषाओं में विन्डो 2000 की क्षमता विकसित करने के लिए अमेरिका के सुप्रसिद्ध माइक्रोसॉफ्ट कॉरपोरेशन के साथ काम भी किया है।

केन्द्र द्वारा डिजाइन किये गये सॉफ्टवेयर वैमानिकी डिजाइन अभिकरण, भारतीय तेल निगम, नेल्को, एचटीएल, एमटीएनएल, कॉरपोरेशन बैंक और ओएनजीसी जैसे संगठनों द्वारा इस्तेमाल किये जा रहे हैं। इसके अतिरिक्त इसने तीव्र सूचना पुनःप्राप्ति, बहुभाषी संगणन, त्रिविमीय ग्राफिक्स, आभासी वास्तविकता (Virtual reality) और कैम्पस भर्ती के लिए ऑन–लाइन परीक्षण जैसे क्षेत्रों में भी अग्रणी काम किया है। डॉ. मुदूर गर्व से कहते हैं, "अनुसंधान व विकास और उद्योगों को दिये जाने वाले परामर्श दोनों में हमारी सफलता का कारण यह है कि हमारे पास कोई मजबूत पदानुक्रम संरचना नहीं है। हम विश्वास करते हैं कि विचारों का प्रवाह अकादमिक (शैक्षिक) औपचारिकता के माध्यम से होना चाहिए।" केन्द्र के कर्मचारियों को शोध–पत्र प्रकाशित करने, सम्मेलनों एवं विचार–गोष्ठियों में पत्र प्रस्तुत करने तथा विनिबंध एवं पाठ्य पुस्तक लिखने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है।

कोई भी देश कुशल श्रमशक्ति के सतत् सृजन के बिना अपनी वृद्धि और विकास को स्थायित्व प्रदान नहीं कर सकता। अपने प्रारंभ से ही यह केन्द्र देश में सॉफ्टवेयर एवं इंटरनेट, मानव शक्ति में सुधार लाने के लिए सतत् शिक्षा हेतु उच्च एवं स्नातकोत्तर पाठ्यक्रमों को संचालित करता रहा है। यह बहुत से एक वर्षीय स्नातकोत्तर डिप्लोमा कोर्स पेश करता है। इन पाठ्यक्रमों (Courses) में नामांकन प्रतिवर्ष आयोजित होने वाली एक अखिल भारतीय प्रतियोगिता परीक्षा के आधार पर होता है, जिसे 'सॉफ्टवेयर प्रौद्योगिकी में सामर्थ्य' (Competence in software Technology) कहा जाता है। आज इस परीक्षा को भारतीय उद्योग में एक निर्देश–चिन्ह (बेंचमार्क) माना जाता है और यहां तक कि इसे आईआईटी, मुम्बई एवं अन्य संस्थानों के विभिन्न उच्चस्तरीय पाठ्यक्रमों में नामांकन के लिए एक छनित्र (फिल्टर) के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। इस परीक्षा में प्रतिवर्ष लगभग 10,000 छात्र बैठते हैं। स्नातकोत्तर डिप्लोमा पाठ्यक्रमों के लिए कक्षाएं प्रत्येक शनिवार/रविवार को होती हैं तथा पाठ्यक्रमों के प्रति गहरा झुकाव होने के कारण केन्द्र में लगातार प्रायः कई पालियों में प्रयोग संचालित किये जाते हैं।

डॉ. मुदूर का कहना है कि, "हमारे पास अनुसंधान और अध्यापन के लिए अलग–अलग स्टाफ नहीं हैं। हमारे स्टाफ अग्रणी एवं औद्योगिक अनुसंधान करने के साथ ही साथ छात्रों को पढ़ाते और प्रशिक्षित भी करते हैं।" अभी तक केन्द्र में संचालित अग्रणी अनुसंधान के लिए नौ छात्रों को पीएच. डी. उपाधि प्रदान की गयी है। वास्तव में, केन्द्र में पीएच. डी. करने के लिए प्रसिद्ध इन्फोसिस टेक्नोलॉजीज ने दो छात्रवृत्तियों की शुरुआत की है।

15 वर्ष की अपनी छोटी–सी जीवन अवधि के दौरान केन्द्र ने अपने क्षेत्र एवं प्रासंगिकता दोनों में अभिवृद्धि की है। इसे अपने योगदान के लिए बहुत से राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय पुरस्कार और पहचान मिली है। यह अपने विस्तार के लिए पूरी तरह से तैयार है। यह नयी मुम्बई और बैंग्लोर में छात्रों के लिए छात्रावास सुविधाओं के साथ दो और कैम्पस बना रहा है। नयी मुम्बई स्थित कैम्पस ऑन–लाइन लर्निंग के लिए एक राष्ट्रीय संसाधन केन्द्र तथा बैंग्लोर स्थित कैम्पस एक सॉफ्टवेयर अभियांत्रिकी अनुसंधान प्रयोगशाला होगा। डॉ. मुदूर मुस्कुराते हुए कहते हैं कि "हम तब तक विश्व स्तरीय मानक नहीं हासिल कर सकते जब तक कि हमारे पास काम में उत्कृष्ट मानव अनुनाद न हो। हम अपने सभी कैम्पसों में अपने कार्यों में इसे अपनाने का विचार रखते हैं।"

राष्ट्रीय सॉफ्टवेयर प्रौद्योगिकी केन्द्र, गुलमोहर क्रॉस रोड नं.–9, जुहू, मुम्बई–400049
वेबसाइट : www.ncst.ernet.in

– हिन्दी रूपांतरणः अनिल कुमार द्विवेदी

• • •

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की अभिनव उपलब्धियां

नयी मलेरिया औषधि में प्रोटीन अनुसंधान सहायक

मलेरिया के कई उपचारों के बावजूद, मलेरिया से प्रति वर्ष 2.7 मिलियन लोग मारे जाते हैं। इस घातक बीमारी के परजीवियों ने अभी तक उपलब्ध लगभग सभी दवाइयों के प्रति प्रतिरोधक क्षमता विकसित कर ली है। अभी हाल ही में साइंस नामक जर्नल में छपा शोध इसमें सहायक हो सकता है। वैज्ञानिकों ने यह खोजा कि मानव और मलेरिया कारक परजीवी प्लाज्मोडियम एक एकल एन्जाइम को कैसे नियंत्रित करते हैं। यह खोज भविष्य में तैयार की जाने वाली औषधियों में सहायक होगी।

प्लाज्मोडियम उन दवाओं के प्रति संवेदनशील है जो डाइहाइड्रोगोलेट रिडक्टेड (डी.एच.एफ.आर.) नामक एन्जाइम पर आक्रमण करती हैं। इस एन्जाइम को मानव भी उत्पन्न करते हैं। पूर्व में किए गये अनुसंधान यह बताते हैं कि परजीवियों को मारने के बावजूद यह रोगियों पर प्रभाव नहीं डालती क्योंकि यह दवाएं (डी.एच.एफ.आर.) परजीवी के विरुद्ध अधिक घनिष्ठता रखती हैं। यद्यपि कुछ दवाइयां इस तरह का व्यवहार नहीं रखती परन्तु प्लाज्मोडियम के विरुद्ध नाशक होती हैं। अपने इस कार्य को वाशिंगटन यूनिवर्सिटी के प्रदीपसिन के. राठौर और काई हॉग बताते है कि यह परजीवी शीघ्रता से क्रिया नहीं करता क्योंकि आर.एन.ए. (डी.एच.एफ.आर.) उत्पन्न करता है जो एन्जाइम में भी रहता है। यदि यह औषधि अचानक आक्रमण करती है तो मानव कोशिका में यह प्रोटीन अपेक्षाकृत अत्यधिक मात्रा में उत्पन्न होती है क्योंकि संदेश वाहक आर.एन.ए. उस समय मुक्त हो जाता है जबकि दवाई मानव को डी.एच.एफ.आर. से बांधे रखती है।

अनुसंधानकर्ताओं को आशा है कि यह नयी खोज मलेरिया जीनोम का क्रम निर्धारित करने में मलेरिया जैसी घातक बीमारी के लिए औषधि निर्माण में सहायक होगी। राठौर बताते हैं कि 'आपके पास सभी तरह के नक्शे हो सकते हैं, हथियार हो सकते हैं, बारूद–गोले हो सकते हैं – लेकिन यदि आपको सही लक्ष्य की जानकारी नही है तो ये सब बेकार हैं।' इसी विषय पर प्रकाशित हुए शोध पर होर्नड हर्ग मेडिकल इन्स्टीट्यूट वाशिंगटन युनिवर्सिटी के डेनियल गोल्डवर्ग बताते हैं कि परजीवियों के विरुद्ध दवाई तैयार करने में अभी व्यापक योजना की आवश्यकता है।

स्रोत : साइन्स : अप्रैल 2002

जल प्रदूषक तत्वों की पहचान एवं उन्हें दूर करने के लिए पदार्थ

सामान्यतः जल से विषाक्त पदार्थों को दूर करने के लिए कई चरणों की आवश्यकता होती है। इन उन्मार्गगामी अणुओं को पहले पहचाना जाता है और फिर नष्ट या दूर किया जाता है। अन्ततः जल की शुद्धता के लिए उसका परीक्षण किया जाता है। अभी हाल में ही जर्नल ऑफ फिजीकल कैमेस्ट्री 'बी' में प्रकाशित शोध के अनुसार केवल एक पदार्थ ही इन तीनों चरणों के लिए सक्षम है।

पूर्व शोध के अनुसार यह खोजा गया कि टिटेनियम डाइ–आक्साइड इन प्रदूषक तत्वों से संघर्ष की क्षमता रखता है। नोट्रेडेमी यूनिवर्सिटी के प्रशान्त कामथ और उनके सहयोगियों ने यह खोजा कि जिंक आक्साइड (ZnO) भी पानी में उपस्थित कार्बनिक अशुद्धता को दूर कर सकता है। उन्होंने अपना यह परीक्षण कार्बनिक एरोमैटिक प्रदूषक क्लोरीनेटिड फिनोल पर किया। प्रायः जिंक आक्साइड विजीबल विकिरण उत्सर्जित करता है जब यह पदार्थ जल प्रदूषक जैसे क्लोरीनेटिड फिनोल के सम्पर्क में आता है तो निकलने वाले विकिरण की मात्रा तेजी से घट जाती है। अनुसंधानकर्ताओं ने यह पाया कि पदार्थ का यह व्यवहार कम प्रदूषक सान्द्रता अर्थात दस लाख का एक भाग में मापा जा सकता है और यह क्रिया एक मिनट में सम्पन्न हो जाती है।

इतना ही नहीं, जब ZnO की मात्रा एक घातक पदार्थ को पहचान लेती है तो वह उसको दूर करने में भी सहायक हो सकती है। ZnO जब अल्ट्रावाइलेट प्रकाश में लाया जाता है तो वह अशुद्धियों को स्वयं नष्ट हुए बिना ही तोड़ देता है। अशुद्धियों को नुकसान न पहुंचाने वाले पदार्थ में बदलने के उपरान्त ZnO की फिल्म अधिक तेजी से चमकने लगती है। अभी तक इसका व्यावसायिक प्रयोग उपलब्ध नहीं है, किन्तु अनुसंधानकर्ताओं ने यह सुझाव दिया कि ZnO पर आधारित नेनोसेन्सर पीने वाले पानी की शुद्धता नापने में सहायक होगा।

स्रोत : साइंटिफिक अमेरिकन, फरवरी 2002

स्वास्थ्य के लिए 'इसरो' द्वारा नया सेटेलाइट भेजने की योजना

देश के दूर दराज के इलाकों तक स्वास्थ्य सेवाओं और टेलीमेडीसन का नेटवर्क स्थापित करने हेतु भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संस्थान ने स्वास्थ्य सेटेलाइट भेजने की योजना बनायी है।

कनार्टक टेलीमेडीसन प्रोजेक्ट पर 'इसरो' के चेयरमैन डॉ. के. कस्तूरीरंगन ने बताया कि स्वास्थ्य सेवाओं और टेलीमेडीसन के लिए पूर्णतः समर्पित यह सेटेलाइट अपनी तरह का प्रथम सेटेलाइट होगा। उन्होंने यह भी बताया कि इस नेटवर्क को बढ़ाने हेतु इसमें 12–14 ट्रांसपोंडरो का प्रयोग किया जाएगा और अभी इस सेटेलाइट को भेजने की कोई तारीख निर्धारित नहीं की गयी है। पहले छह महीने टेलीमेडीसन नेटवर्क प्रक्रिया का अध्ययन किया जाएगा।

सैटेलाइट और उससे संलग्न उपकरणों की डिजाइन के लिए सभी आवश्यक पहलुओं पर अध्ययन आवश्यक है और सैटेलाइट को अन्तिम स्वरूप देने से पहले लगभग 2 वर्ष तक इस प्रणाली को परिभाषित करने में व्यतीत किए जाएंगे। उन्होंने यह भी बताया कि इस सैटेलाइट को भेजने का अंतिम विचार लेने के बाद तीन या साढ़े तीन वर्ष का समय लगेगा।

भारत में टेली मेडीसन के चार प्रोजेक्टों पर 'इसरो' ने मुख्य भूमिका अदा की है। इस प्रोजेक्ट के तहत दूर दराज के स्वास्थ्य केन्द्रों को इन्सेट सैटेलाइट के माध्यम से शहर के स्वास्थ्य केन्द्रों से जोड़ा जाएगा।

स्रोत : पी.टी.आई. : अप्रैल 2002

संकलन : कपिल त्रिपाठी

• • •

पृष्ठ 1 का शेष

विप्र. ने विज्ञान सेटेलाइट रेडियो संचार की सशक्त प्रौद्योगिकी का उपयोग करने के लिए एक नीति तैयार की है जिसमें विप्र. ने विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी लोकप्रियकरण और शिक्षा तथा प्राकृतिक आपदाओं के प्रबंधन के लिए, सेटेलाइट रेडियो संचार की सशक्त प्रौद्योगिकी का, अन्य उपलब्ध प्रौद्योगिकियों के साथ–साथ इस्तेमाल करने हेतु एक नीति तैयार की है। विप्र को आशा है कि वर्ल्डस्पेस रेडियो पर भविष्य में शीघ्र ही नियमित प्रसारण शुरू कर दिया जाएगा।

• • •

दिल्ली के जिन स्कूलों में वर्ल्डस्पेस रेडियो के प्रदर्शन तथा प्रायोगिक प्रसारण आयोजित किए गए, उनमें से एक स्कूल में दर्शकों का एक समूह

ब्ल्यूटूथ

❑ किंकिनी दासगुप्ता मिश्रा

जैसाकि आप सोच सकते हैं, यह बात खराब दांतों के बारे में नहीं है, बल्कि ब्ल्यूटूथ एक नयी प्रौद्योगिकी का नाम है, जो बड़ी मात्रा में व्यावसायिक रूप से बाजार में आने के लिए तैयार है और जो हमारे द्वारा मशीनों का इस्तेमाल किये जाने वाले तरीकों में उल्लेखनीय परिवर्तन लाने का विश्वास दिलाती है।

ब्ल्यूटूथ अपने सर्वाधिक बुनियादी स्वरूप में एक केबल प्रतिस्थापन प्रौद्योगिकी है। जब आप अपने की–बोर्ड को कम्प्यूटर, खासकर प्रिंटर, माउस, मॉनीटर इत्यादि से जोड़ते हैं तो ये सभी केबल द्वारा ही आपस में जुड़ते हैं। ब्ल्यूटूथ प्रौद्योगिकी प्रयुक्त केबल को प्रतिस्थापित करेगा। एक ब्ल्यूटूथ संयोजन पर्सनल कम्प्यूटरों (PCs), मोबाइल फोनों तथा अन्य उपकरणों के बीच उच्च गति, निम्न शक्ति वाले सूक्ष्म तरंग बेतार (wireless) संचार तथा नेटवर्किंग को उपलब्ध करायेगा। यह कहीं भी इंटरनेट की बेतार संयोजकता का द्वार खोलने में समर्थ होगा। ब्ल्यूटूथ वैश्विक रेडियो आवृत्ति (RF) प्रौद्योगिकी पर आधारित है, जो 2.4 गीगाहर्ट्ज औद्योगिक, वैज्ञानिक और चिकित्सा (ISM) बैंड पर परिचालित होता है।

ब्ल्यूटूथ बेतार प्रौद्योगिकी बुनियादी सेलुलर डिजिटल रेडियो डिजाइनों से विकसित हुई, जिसे 1980 के दशक की शुरुआत से मोबाइल फोनों में इस्तेमाल किया जाने लगा। प्रारंभ में अन्य असंख्य कंपनियों द्वारा स्वीकार करने से पूर्व एल.एम. एरिक्सन द्वारा इसकी कल्पना की गयी। लघु माइक्रोचिप के साथ रेडियो ट्रांसीवर्स के लिए ब्ल्यूटूथ आदर्श है, जिसे कम्प्यूटरों, प्रिंटरों, मोबाइल फोनों आदि के साथ जोड़ दिया जाता है। उदाहरण के लिए जब आप सड़क पर होते हैं और इंटरनेट तक पहुंचना चाहते हैं तो ब्ल्यूटूथ इनके बीच ब्ल्यूटूथ–युक्त हाथ में लिए जाने वाले और मोबाइल फोन के बीच बिना किसी तार के सम्पर्क स्थपित करता है जिससे कि आप वेबसाइट देख सकें और अपने ई–मेल की जांच कर सकें। आपका मोबाइल फोन आपके पता–पुस्तिका से कोई भी नम्बर अपने आप डायल कर सकता है।

क्या आप जानते हैं, इसने यह नाम कहां से प्राप्त किया? इसका नाम डेनिस वाइकिंग और किंग हैराल्ड ब्लैटैंड (अंग्रेजी में ब्ल्यूटूथ) के नाम पर रखा गया, जो दसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में विद्यमान थे। हैराल्ड ब्लैटैंड ने डेनमार्क और नार्वे को एकीकृत और नियंत्रित किया (अतः नाम से ली गयी प्रेरणाः ब्ल्यूटूथ के माध्यम से उपकरणों का एकीकरण)। शुरुआत में ब्ल्यूटूथ बेतार प्रौद्योगिकी का लक्ष्य दूरसंचार और कम्प्यूटिंग उद्योगों का एकीकरण करना था। उसके बाद ब्ल्यूटूथ बेतार प्रौद्योगिकी को प्रायः उन सभी क्षेत्रों को प्रभावित करने के लिए विकसित किया गया है, जिन्हें केबल प्रतिस्थापन की आवश्यकता है।

ब्ल्यूटूथ एसआईजी (विशेष रुचि समूह) एक उद्योग समूह है, जो दूरसंचार और कम्प्यूटिंग उद्योगों में नेतृत्व करता है ताकि प्रौद्योगिकी का विकास किया जा सके तथा उसे बाजार में लाया जा सके। 2000 से अधिक कंपनियों ने ब्ल्यूटूथ अनुकूलक समझौते को लागू किया है और वे ब्ल्यूटूथ एसआईजी के सदस्य हैं।

ब्ल्यूटूथ रेडियो विनिर्देशनों को ग्रहीत करता है, जो इसे मोबाइल फोन और डेस्क टॉप जैसे उपकरणों के बीच फाइल शेयरिंग और आंकड़ा अंतरण में समर्थ बनाता है। यह सर्वदिशिक है और इसकी वर्तमान न्यूनतम दूरी 10 सेंटीमीटर से 10 मीटर तक है, जिसे बढ़ी हुई संचरण क्षमता के साथ 100 मीटर तक बढ़ाया जा सकता है। इस प्रौद्योगिकी ने इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों में अपने लघु आकार, सस्तेपन तथा अल्प दूरी के ट्रांसीवर्स द्वारा अपना लक्ष्य हासिल कर लिया है, जो आज उपलब्ध है। ब्ल्यूटूथ सुविधा आईएसएम बैंड के 2.4 गीगाहर्ट्ज पर निम्न रेडियो आवृत्ति पर वैश्विक स्तर पर उपलब्ध है और तीन वायस चैनलों के साथ 721 किलोबाइट प्रति सेकेंड (Kbps) से ऊपर की डाटा स्पीड को सहयोग करता है। हालांकि निम्न आवृत्ति अननुज्ञप्त है (जो अन्य रेडियो आवृत्तियों से व्यतिकरण बढ़ाता है), ब्ल्यूटूथ का कहना है कि इस प्रौद्योगिकी को पूर्णतया क्रियाशील रूप में डिजाइन किया गया है। यहां तक कि काफी शोर वाले रेडियो वातावरण में भी यह क्रियाशील रहता है और इसका ध्वनि प्रसारण कठिन परिस्थितियों के बावजूद सुना जा सकता है। मूल ब्ल्यूटूथ विनिर्देशन 10 मिली वाट से कम उत्पादन शक्ति के लिए आवश्यक होता है।

ब्ल्यूटूथ मापांक या तो इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों में बनाया जा सकता है या फिर एक अनुकूलक के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है। उदाहरण के लिए एक कम्प्यूटर में, इन्हें पीसी कार्ड के रूप में बना सकते हैं या यूएसबी पोर्ट के जरिये बाहर से जोड़ सकते हैं। प्रत्येक उपकरण आईईई 802 मानक से सम्बन्धित अद्वितीय 48–बिट का होता है। इसके जोड़ प्वाइंट से प्वाइंट तक या अनेक प्वाइंटों तक हो सकते है। ब्ल्यूटूथ उपकरण यादृच्छिक रूप से एक सेकेंड में अधिकतम 1600 बार तक अपनी आवृत्तियों में परिवर्तन द्वारा रेडियो व्यतिकरण (बाधा) से सुरक्षा प्रदान करते हैं। यह प्रौद्योगिकी आवृत्ति उछाल (hopping) के रूप में जानी जाती है। ब्ल्यूटूथ रेडियो मजबूत कड़ी बनाने के लिए तीव्र स्वीकृति और आवृत्ति उछाल योजना का इस्तेमाल करता है। ब्ल्यूटूथ रेडियो मापांक एक पैकेट को प्राप्त करने या प्रेषित करने के बाद नयी आवृत्ति के उछाल द्वारा अन्य संकेतों के हस्तक्षेप से परहेज करता है। ब्ल्यूटूथ माप सार्वजनिक और निजी दूरसंचार तंत्र को बाधा या क्षति पहुंचाने का काम नहीं करेगा।

जब एक ब्ल्यूटूथ उपकरण दूसरे के क्षेत्र में आता है (यह 10 सें.मी. और 100 सेंमी. के बीच स्थित हो सकता है), तो वे अपने आप पते तथा सामर्थ्य विवरणों की अदला–बदली कर लेते हैं। तब वे आवश्यकतानुसार सुरक्षा और त्रुटि सुधार के साथ 1 मेगाबाइट्स जोड़ (प्रौद्योगिकी की दूसरी पीढ़ी में 2 मेगाबाइट्स प्रति सेकेंड तक) स्थापित कर सकते हैं।

आइये, अब हम यह देखें कि एक विशिष्ट आधुनिक बैठक कक्ष में ब्ल्यूटूथ आवृत्ति उछाल और पर्सनल एरिया नेटवर्क से मुक्त व्यवस्था कैसे काम करती है। उदाहरण के लिए ऐसे कमरे में स्टीरियो, डीवीडी प्लेयर, सैटेलाइट टीवी रिसीवर और टेलीविजन के साथ मनारंजन की व्यवस्था होती है। वहां कार्डलेस टेलीफोन और पर्सनल कम्प्यूटर भी होता है। इन व्यवस्थाओं में से प्रत्येक ब्ल्यूटूथ का इस्तेमाल करता है और मुख्य इकाई एवं उसके बाहर बात करने के लिए प्रत्येक का अपना खुद का नेटवर्क (तंत्र) होता है।,

कॉर्डलेस टेलीफोन में एक ब्ल्यूटूथ ट्रांसमीटर होता है और दूसरा हैंडसेट में होता है। निर्माता एक पते के साथ प्रत्येक इकाई के लिए प्रोग्राम बनाता है जिससे पतों की श्रेणी में कमी आये। यह एक विशेष प्रकार के उपकरणों के लिए स्थापित किया जाता है। जब तल को पहली बार खोला जाता है, तो यह किसी खास क्षेत्र की किसी इकाई के पते से प्रत्युत्तर पूछने के लिए रेडियो संकेत भेजता है। उस समय हैंडसेट के पास अपने क्षेत्र के भीतर एक पता होता है, यह जवाब देता है और एक लघु नेटवर्क स्थापित हो जाता है। अब यदि इन उपकरणों में से कोई एक किसी अन्य सिस्टम से संकेत प्राप्त करता है, तो यह उसे अस्वीकार करेगा। इसका मतलब है कि वह नेटवर्क से होकर नहीं आया है। कम्प्यूटर और मनोरंजन के साधन एक समान मार्ग से होकर जाते हैं, जो निर्माताओं द्वारा स्थापित क्षेत्रों के पतों के बीच नेटवर्क स्थापित करते हैं। एक बार जब नेटवर्क स्थापित हो जाता है तो प्रणाली उन सभी के बीच बातचीत शुरू कर देती है। प्रत्येक नेटवर्क उपलब्ध आवृत्तियों से होकर यादृच्छिक रूप से चलता है, ताकि सभी नेटवर्क एक–दूसरे से पूर्णतया अलग हो सकें।

अब बैठक कक्ष के लिए तीन अलग–अलग नेटवर्क स्थापित हो चुके हैं, जिनमें से प्रत्येक उपकरण द्वारा तैयार किया गया है, जिससे ट्रांसमीटरों का पता जाना जा सके। इसे सुना जा सकता है और प्राप्तकर्ता के पते पर बात की जा सकती है। उस समय इसके प्रचालन के दौरान प्रत्येक नेटवर्क की आवृत्ति एक सेकेंड में हजारों बार बदली जा सकती है। ऐसा असंभावित ही है कि कोई दो नेटवर्क एक ही समय में एक ही आवृत्ति पर काम कर रहे हों। यदि ऐसा होता है,

तब परिणामी भ्रम केवल सेकेंड के एक छोटे अंश को आच्छादित करेगा। ऐसी त्रुटियों को ठीक करने के लिए बनाया गया सॉफ्टवेयर भ्रमपूर्ण सूचनाओं के अंश को बाहर कर देगा तथा नेटवर्क के व्यापार को आगे बढ़ायेगा।

ब्ल्यूटूथ बेतार प्रौद्योगिकी उपयोगकर्त्ताओं को सहजता और शीघ्रता से कम्प्यूटिंग और दूरसंचार उपकरणों की वृहद् शृंखला से केबल की आवश्यकता के बिना जुड़ने में समर्थ बनायेगा। यह कार्यालय के अंदर और बाहर कम्प्यूटरों, मोबाइल फोनों तथा अन्य सचल उपकरणों के लिए सम्प्रेषण क्षमताओं का विस्तार करेगा। लेकिन केवल प्रतिस्थापना द्वारा खुले उपकरणों के परे भी ब्ल्यूटूथ रेडियो प्रौद्योगिकी वर्तमान डाटा नेटवर्क के लिए व्यापक सेतु उपलब्ध कराता है। स्थिर नेटवर्क आधार तंत्र से दूर उपकरणों से जुड़े हुए छोटे निजी व तदर्थ समूहों के लिए बाह्य अंतरापृष्ठ और साधन तंत्र निर्मित करता है।

और अधिक अध्ययन के लिए देखें:

ब्ल्यूटूथ एप्लीकेशन डेवलपर्स गाइड– जेनिफर ब्रे एट अल; डिस्कवरिंग ब्ल्यूटूथ– माइकेल मिलर; एचटीटीपी: //डब्ल्यू डब्ल्यू डब्ल्यू. पी ए एल एम ओ एस. कॉम; एच टीटीपी://डब्ल्यू डब्ल्यू डब्ल्यू. ई जी 3. कॉम; डब्ल्यू डब्ल्यू डब्ल्यू. //हाऊ स्टफ वर्क्स.कॉम;

– हिन्दी रूपांतरण: अरुण कुमार श्रीवास्तव

• • •

संपादक के नाम पत्र

आपके द्वारा प्रेषित 'ड्रीम 2047' के जनवरी 2002 से अप्रैल 2002 के चार अंक मिले। विज्ञान को लोकप्रिय ढंग में प्रस्तुत करने में आपका यह सतत प्रयास अनूठा एवं अद्वितीय है। सबसे अनूठी बात तो यह है कि प्रत्येक लेख को आपने अंग्रेजी एवं हिन्दी दोनों में प्रस्तुत किया है और अद्वितीय सफलता यह है कि दोनों रूपान्तर बिल्कुल मौलिक प्रतीत होते हैं, अनुवाद नहीं। मुझे याद आता है ऐसा द्विभाषी प्रयास हिन्दी और उर्दू में पण्डित सुन्दरलाल ने छठे दशक के मध्य में किया था, परन्तु हिन्दी–उर्दू की व्याकरण एक सी होने के कारण यह कार्य आपेक्षत: सरल था। आपके लेखों के अतिरिक्त डॉ. सुबोध महंती द्वारा लिखित रमन तथा कृष्णन का जीवन–वृत्तांत बहुत प्रभावी लगे। यह डॉ. सुबोध महंती कहां हैं। शायद आप लेखकों का परिचय लेख के अंत में एक–दो सतरों में दे सकें तो पाठकों को सुविधा होगी। यद्यपि मैंने 3 वर्ष (1947–50) 'विज्ञान' (प्रयाग) का सम्पादन किया है, तथापि 1949 में मैंने प्रोफेसर कृष्णन का जीवन–वृत्तांत हिन्दी एवं अंग्रेजी दोनों ही पत्रिकाओं और समचार पत्रों में छापा था। वैसे तो खोज कार्य में अधिक व्यस्त रहने के कारण अधिक समय नहीं मिलता, परन्तु 1948 में मैंने अपने थीसिस के खर्चे (लगभग 500 रुपए) का कर्ज उतारने के लिए 1949 जनवरी में इण्डियन सांइस कांग्रेस अधिवेशन (इलाहाबाद) के प्रेसीडेण्ट का जीवन वृत्तांत तथा अन्य विषयों पर अंग्रेजी तथा हिन्दी दोनों में लगभग दर्जन लेख लिख कर लगभग 1200 रुपए अर्जित कर लिए थे, जो उस समय मुझे मिलने वाले मासिक वेतन के छै–गुणा थे। 1964 में सी.एस.आई.आर के निदेशक मण्डल की बैठक में पंण्डित नेहरू के समक्ष 'विज्ञान को लोकप्रिय बनाने' के उत्तरदायित्व को न निभा पाने के लिए कुछ कटाक्ष किए थे। मुझे क्या मालूम था कि मीटिंग के बाद पंडित नेहरू और डा. हुसैन ज़हीर 'विज्ञान प्रगति' के निर्देशन का भार ही मेरे ऊपर डाल देंगे; परन्तु प्रसन्नता है कि श्री कृष्ण मुरलीलाल नामक एक सहयोगी के सफल प्रयास से 'विज्ञान प्रगति' की ग्राहक संख्या 100 से लगभग 60000 पहुंच गयी थी। श्रेय तो सब अग्रवाल जी को ही मिलना चाहिए, परन्तु मेरे लिए भी चुनौती की अनुभूतियां थीं।

प्रो. रा.च. मेहरोत्रा
4/682, जवाहर नगर, जयपुर, राजस्थान 302004

हम 'ड्रीम 2047' के नियमित पाठक हैं। यह पत्रिका मुझे पिछले एक वर्ष से नहीं बल्कि मई 2001 से प्राप्त हो रही हैं। मैं अपने विद्यालय में इसके लिए एक संस्था बनाने की तैयारी कर रही हूं, जिसमें अधिक से अधिक सदस्य हों। जब संस्था बन जायेगी, तब हम आपको सूचित करेंगे। हमें आपकी पत्रिका समय पर नहीं मिलती, माह समाप्त हो जाने के पश्चात हमें पत्रिका मिलती है। इसमें आप पृष्ठों की संख्या अर्थात् सामग्री और ज्यादा दीजिए। आधुनिक विज्ञान व नवीनतम आविष्कार की विस्तार से जानकारी दीजिए। आशा है आप हमारे उपरोक्त सुझाव व शिकायतों पर ध्यान देंगे।

गरिमा शर्मा
शासकीय कन्या उच्चतर माध्यमिक विद्यालय चारामा, जिला कांकेर (छत्तीसगढ़) 494337

मैं विज्ञान विषय का 12वीं कक्षा का छात्र हूं। मुझे ड्रीम 2047 के 4–5 अंक पढ़ने को मिले। विभिन्न वैज्ञानिकों की जीवनियां तथा सामयिक विषयों व विज्ञान की विशेष शाखाओं के विकास पर आधारित लेख पढ़े। सभी लेख उपयोगी व अच्छे होने के साथ–साथ रोचक भी हैं। ये लेख विज्ञान को उबाऊ या बोझिल समझने वाले छात्रों के लिए खास तौर पर उपयोगी हैं। जीवनियां नई प्रेरणा का संचार करने में सक्षम है। भारतीय समाज में वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास ऐसी सक्षम पत्रिकाओं के माध्यम से काफी हद तक संभव है।

अतुल कुमार शर्मा
म.नं. 711, ब्लॉक–ए, गली नं. 11, पॉकेट–1, सोनिया विहार, दिल्ली–94

'ड्रीम 2047' का अंक प्राप्त हुआ। पत्रिका की संपादकीय 'विलक्षण बाल प्रतिभाएं' काफी प्रभावशाली लगा। सही मायने में संपादक महोदय ने जिस ढंग से बच्चों की प्रतिभाओं को प्रोत्साहन के बदले उनके अभिभावकों द्वारा पतन के रास्ते पर ले जाने के प्रयास को रेखांकित किया वह काबिले तारीफ है। सही मायने में अभिभावकों को अपने बच्चों के भावी जीवन में अपने रंग को भरने का प्रयास नहीं करना चाहिए। बच्चों को अपने जीवन का फैसला उन्हीं के हाथों में छोड़ना ज्यादा बेहतर होगा।

आजाद राजीव रंजन
जिला–समन्वयक, साइंस फॉर सोसायटी, जयप्रकाश नगर, खगड़िया (बिहार) 851204

नाभिकीय विज्ञान तथा उसका उपयोग

❒ अमित रॉय*

नाभिकीय भौतिकी या व्यापक रूप से कहें तो नाभिकीय विज्ञान के अध्ययन के मूल में मानव मन में विश्व के उद्‌भव को लेकर उठती जिज्ञासा और उसके बारे में जानकारी हासिल करना ही है। जैसे कि हम मनुष्य के रूप में अपने उद्‌भव, विभिन्न समाज एवं समुदाय तथा मानव मन के विकास को जानने के लिए इच्छुक रहते हैं ठीक उसी तरह उन भूले कणों जिनसे कि हमारी तथा हमारे चारों तरफ के संसार की सृष्टि हुई है, के बारे में भी हम जानना चाहते हैं।

नाभिकीय भौतिकी के अध्ययन के दो पहलू हैं। प्रथम तो विज्ञान के मूल या आधार तत्वों की छानबीन से संबंधित है जबकि दूसरा पहलू प्रौद्योगिकी से जुड़ा है। विज्ञान की किसी भी शाखा को प्राप्त होने वाला सामाजिक समर्थन उससे मिलने वाले प्रौद्योगिकी लाभों पर बड़े रूप से निर्भर करता है। और नाभिकीय विज्ञान भी इसका अपवाद नहीं है। दरअसल, बड़े पैमाने पर विज्ञान को मिलने वाला शासकीय संरक्षण इस असहाय से प्रेरित हुआ कि परमाणविक नाभिक के विखंडन से प्राप्त होने वाली ऊर्जा को बिजली के उत्पादन के साथ–साथ सामरिक महत्व वाले अनुप्रयोगों में भी काम में लाया जा सकता है।

मानव द्वारा आविष्कृत अन्य प्रौद्योगिकियों की तरह नाभिकीय प्रौद्योगिकी के साथ भी कुछ विवाद जुड़े हैं। कोई भी प्रौद्योगिकी स्वयं में न तो अच्छी होती है और न बुरी। यह तो इस बात पर निर्भर करता है कि उसका इस्तेमाल कैसे किया जाता है। एक प्रश्न जो मुझे एक पहेली की तरह उलझाता है, वह यह है कि मानव विकास के हर चरण में किसी भी प्रौद्योगिकी में निहित सशक्तता का इस्तेमाल मंगलकारी कार्यों की बजाए विनाशकारी कार्यों में ही क्यों किया गया? सुप्रसिद्ध मानवतावादी आविष्कारक बकमिंस्टर फुल्लर इसे जीवनधारिता की बजाए विनाशधारिता की तरफ उठा कदम ही बताते हैं।

आइए, पहले नाभिकीय भौतिकी तथा पदार्थ की संरचना संबंधी हमारी अधुनातम जानकारी की थाह ले जी जाए। परमाणुओं के केंद्र में स्थित नाभिकों में से बहुतों के आकार और स्वरूप के बारे में अब हम जानते हैं। नाभिक का आकार अति लघु, 10^{-11} मीटर के करीब होता है। अगर परमाणु को हम एक आम संभाषण कक्ष जितना बड़ा मान लें तो नाभिक का आकार रेत के एक कण के बराबर ही होगा। बेशक इस आकार में लाने से पहले आपको परमाणु को करीब एक करोड़ (दस मिलियन) गुना आवर्धित करना होगा। सभी नामिक गोलाकार नहीं होते हैं। संतरे, नाशपाती तथा सिगार आदि विभिन्न आकारों के रूप में भी नाभिक पाए जाते हैं। आप आश्चर्य कर रहे होंगे कि पदार्थ के इन अति सूक्ष्म अवयवों के आकार के बारे में इतनी चिंता करने की आखिर आवश्यकता क्या है? लेकिन ये विवरण हमें इस बारे में महत्वपूर्ण सूत्र प्रदान करते हैं कि नाभिक कैसे तथा किस तरह से अपने वजूद को बनाए रखते हैं। अगर एक नाभिक के अंदर हम झांके तो हमें उसके अंदर प्रोटॉन तथा न्यूट्रॉन नामक और भी सूक्ष्म कण नजर आएंगे। इन कणों के आकार के बारे में परिशुद्धतापूर्वक जानकारी अब हासिल की जा चुकी है और वे नाभिक के लगभग दसवें हिस्से के बराबर हैं। इससे भी सूक्ष्मतर स्तर पर जाने पर हम पाते हैं कि प्रोटॉनों तथा न्यूट्रॉनों की रचना भी क्वार्क नामक कणों से हुई है। मुक्त अवस्था (फ्री स्टेट) में क्वार्क नहीं पाए जाते हैं तथा उनके आकार के बारे में भी परिशुद्धतापूर्वक कोई जानकारी अब तक हासिल नहीं हो पाई है। लेकिन प्रोटॉनों तथा न्यूट्रॉनों की तुलना में वे कहीं अधिक सूक्ष्म होते हैं।

परमाणु के अंदर इलेक्ट्रॉन नामक कण भी मौजूद होते हैं जिनका आकार 10^{-14} मीटर से भी कम होता है। आजकल जो शोधकार्य चल रहे हैं उनका उद्देश्य यह जानना है कि पदार्थ के ये सूक्ष्म कण आपस में आखिर किस तरह से अन्योन्य क्रिया करते हैं तथा किस ढंग से परस्पर व्यवस्थित होकर हमारे चारों तरफ नजर आने वाले विभिन पिंडों की वे रचना करते हैं।

नाभिकीय विज्ञान में अध्ययन का एक और मुख्य क्षेत्र तत्वों की सृष्टि से जुड़ा है। हम मनुष्यों समेत विश्व में पाए जाने वाले सभी पदार्थ उन परमाणुओं से ही बने हैं जिनकी सृष्टि किसी तारे या फिर किसी तारकीय पिंड में नाभिकीय प्रक्रियाओं के चलते ही हुई है। प्रयोगशालाओं में कण त्वरित्र नामक अतिकाय मशीनों से नाभिकीय प्रक्रियाओं के अध्ययन द्वारा मोटे रूप में अब हमारे हाथ यह जानकारी लग चुकी है कि विश्व में अधिकतर तत्वों की सृष्टि किस तरह से हुई है। लेकिन अब भी कई अनुत्तरित प्रश्न एवं अनजाने तथ्य हैं और इन्हें जानने की चाह ही अधुनातम शोध को प्रोत्साहन देती है।

नाभिकीय विज्ञान के अध्ययन के लिए हमारे पास उपलब्ध प्रमुख वैज्ञानिक साधन हैं त्वरित्र, संसूचक तथा आंकड़ों की प्राप्ति एवं विश्लेषण के लिए प्रयुक्त होने वाली इलेक्ट्रॉनिक और कम्प्यूटर प्रणालियां। नाभिक तथा उसकी संरचना करने वाले मूल कणों के बारे में जानकारी हासिल करने की जोड़–तोड़ ने, उल्लिखित तीनों साधनों को न केवल और भी उन्नत बनाने में अपनी महती भूमिका है बल्कि शोध–अध्ययन के अन्य क्षेत्रों के लिए भी अब इनकी उपलब्धता संभव बना दी है।

अतः नाभिकीय विज्ञान कई अन्य क्षेत्रों जैसे कि पदार्थ विज्ञान, जीव विज्ञान, रसायन विज्ञान, भू–विज्ञान, पुरातत्व विज्ञान तथा अपराध विज्ञान आदि के लिए भी बड़े शक्तिशाली साधन उपलब्ध करा पाने में सक्षम है। संघनित पदार्थ तथा पदार्थ विज्ञान में पदार्थों की संरचना न्यूट्रॉन विवर्तन तथा विस्तारित एक्स–किरण ऑगर प्रतिदीप्ति स्पेक्ट्रमिकी (एक्सटेंडिड एक्स–रे ऑगर फ्लोरेसेंस स्पेक्ट्रॉसकॉपी) नामक तकनीकों द्वारा सिंक्रोटॉन विकिरण को काम में लेकर ज्ञात की जा सकती है। नाभिकीय चुंबकीय अनुवाद (न्यूक्लियर मेग्नेटिक रेजोनेंस) इस क्षेत्र के लिए एक सर्वतोमुखी साधन की भूमिका निभाता है। पदार्थों के संगठन को प्रोट्रॉन प्रेरित एक्स–किरण उत्सर्जन (प्रोट्रॉन इंड्यूस्ड एक्स–रे एमिशन), प्रत्यास्थ प्रतिक्षय संसूचक विश्लेषण (इलास्टिक रिकायल डिटेक्शन एनालिसिस), रदरफोर्ड पश्च प्रकीर्णन (बैक स्केटरिंग), द्वितीयक आयन द्रव्यमान स्पेक्ट्रमिति (सेकेंडरी आयन मास स्पेक्ट्रॉमीटरी) आदि तकनीकों, जिनका विकास नाभिकीय विज्ञान संबंधी अध्ययनों के जरिए ही हुआ है, द्वारा ज्ञात किया जा सकता है। हाल ही में क्षिप्र भारी आयनों (स्विफ्ट हेवी आयन) का इस्तेमाल पदार्थों के रूपांतरण तथा अभिनव पदार्थों की सृष्टि आदि में किया जा रहा है।

सिंक्रोट्रॉन विकिरण फोटानों का एक शक्तिशाली स्रोत है। इसके इसी गुण के कारण रसायन तथा जीव विज्ञान के लिए उपयोगी अणुओं की संरचना का पता लगाने में इसका व्यापक तौर पर इस्तेमाल किया जाता है। एक्सलेरेटर मास स्पेक्ट्रॉमीटरी (ए.एम.एस.) का इस्तेमाल भू–विज्ञान, सागर विज्ञान, पुरातत्व विज्ञान तथा जलवायु के अध्ययनों आदि में किया जाता है। ए.एम.एस. तकनीक में अति न्यून मात्रा में लिए गए किसी प्रतिदर्श में मौजूद परमाणुओं को आयनीकृत करने के बाद उन्हें काफी उच्च ऊर्जा तक त्वरित किया जाता है ताकि नाभिकीय संसूचक तकनीकों द्वारा व्यष्टिगत परमाणुओं का संसूचन और उनकी पहचान की जा सके। इस तकनीक में काफी उच्च सुग्राहिता मौजूद होती है तथा इसमें ट्रेसर पदार्थ की अति सूक्ष्म मात्रा की ही आवश्यकता होती है। इस तकनीक के जीव वैज्ञानिक अनुप्रयोगों के तहत त्वचा द्वारा रसायनों के उद्‌ग्रहण या अवशोषण की मात्रा ज्ञात की जा सकनी संभव है तथा कैंसरजनों एवं उत्परिवर्तजनों के संसर्ग में आने पर डी.एन.ए. में पैदा हुई क्षति का मापन वास्तविक एक्सपोजर स्तर पर किया जा सकता हैं। उदाहरण के लिए, किसी सिगरेट से निस्सृत बेंजीन की मात्रा चूहे की अस्थि–मज्जा में स्थित उन प्रोटीनों, जिन पर कि यह टाक्सिन अपना दुष्प्रभाव दिखाता है, में अंतःजीवे (इन वाइवो) मौजूद पाई गई।

परोक्ष रूप से नाभिकीय विज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों में अनेक अनुप्रयोग हैं जिनमें से कुछ का उल्लेख नीचे किया जा रहा है।

अर्द्धचालकों में आयन रोपण तकनीक का इस्तेमाल परिशुद्ध एवं पुनर्जन्य सूक्ष्म परिपथों के निर्माण में किया जाता है। आयन पुंजों के अन्य उपयोगों में धातुओं तथा उन पर चढ़ने वाली परतों की पृष्ठीय कठोरता एवं संक्षारण प्रतिरोध (कोरोजन रेजिस्टेंस) में सुधार तथा घर्षण गुणांक और आसंजक (एडहेसिव) गुणधर्मों में फेर–बदल आदि शामिल हैं। आयन रोपित पदार्थों के आटोमोटिव तथा वैमानिक उद्योगों (बॉल बेयरिंग, फ्रैकरौफ्ट तथा रोटर रौफ्ट आदि) तथा आयुर्विज्ञान (कृत्रिम कूल्हों तथा घुटनों के जोड़ आदि) में अनेक अनुप्रयोग हैं।

ऐसे प्लास्टिक पदार्थों के निर्माण में जो कार्बनिक विलायकों में अघुलनीय तथा अग्निरोधी होने के साथ–साथ प्रतिकूल वातावरण में झेल कर भी कार्य करने में सक्षम हों, विकिरण संसाधन (रेडिएशन प्रासेसिंग) का इस्तेमाल किया जाता है। इसके प्रयोग द्वारा वर्निश तथा रंगों को भी अति द्रुततापूर्वक उपचारित किया जा सकता है। अनिष्टकारी पदार्थों को विनष्ट करने तथा औद्योगिक गैसों के शुद्धिकरण में भी इसकी महती उपयोगिता है।

औद्योगिक तथा चिकित्सकीय उपयोगों के लिए खाद्य पदार्थों के परिरक्षण तथा पदार्थों के विसंक्रमण में इलेक्ट्रॉन त्वरित्रों द्वारा उत्पन्न विकिरण का व्यापक इस्तेमाल होता है। विकिरण खाद्य पदार्थों को कमरे के तापमान पर लम्बी समयावधि तक बिना किसी क्षय प्रक्रिया के भंडारित किया जा सकता हे। इस तरह आविषालुता लिए रसायनों, खाद्य पदार्थों में जिनके अवशेष पहुंच सकते हैं, के इस्तेमाल से बचा जा सकता है।

माइक्रो फिल्टरों के निर्माण में भी नाभिकीय विज्ञान से फायदे लिए जा रहे हैं। खाद्य उद्योगों तथा जीव वैज्ञानिक शोधों में रुधिर प्लाज्मा के घटकों को पृथक करने एवं कोशिकाओं और सूक्ष्मजीवों के विकास के लिए एक सरंध्र अवस्तर (पोटस सबस्ट्रेट) के रूप में इन फिल्टरों का इस्तेमाल किया जा रहा है।

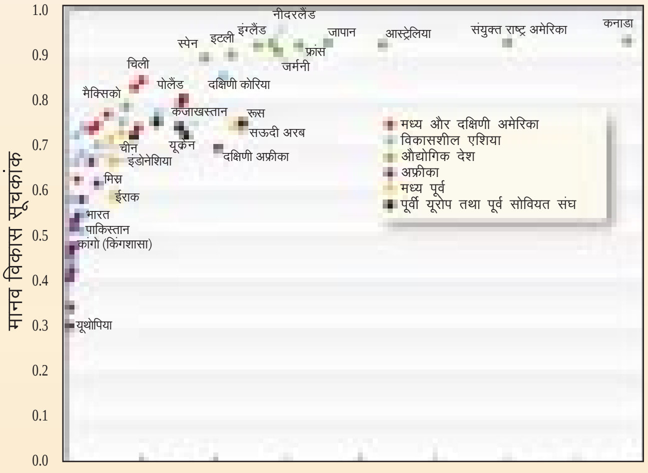

प्रति व्यक्ति वार्षिक बिजली की खपत (किलोवाट घंटे)

रोगों के निदान तथा उपचार में रेडियो समस्थानिकों से अनेक फायदे लिए जा रहे हैं तथा कैंसर जैसे घातक मर्ज के इलाज में उच्च ऊर्जायुक्त विकिरणों को काम में लाया जा रहा है। विकिरण उपचार के अधिकतर मामलों में ही या तो रेडियो आइसोटोप कोबाल्ट–60 से निकलने वाली गामा किरणों का इस्तेमाल किया जाता है या फिर इलेक्ट्रॉन रैखिक एक्सलेरेटर द्वारा उत्सर्जित एक्स–किरणों का।

त्वरित्रों द्वारा प्राप्त तेज गति के आवेशित कणों तथा द्वितीयक न्यूट्रॉनों का उपयोग कैंसर उपचार में किया जा रहा है। शरीर के ऊतकों तक गहराई तथा नियंत्रित रूप से प्रवेश पा लेने की इनकी क्षमता के कारण ही कैंसर के इलाज में उनका उपयोग किया जाता है। पाजिट्रॉन एमिशन टोमोग्राफी में भी त्वरित्रों द्वारा प्राप्त पाजिट्रॉन नामक कणों का इस्तेमाल किया जाता है। अतिचालक चुम्बक टेक्नोलॉजी, जो त्वरित्रों के विकास की दिशा में किए जाने वाले प्रयासों का ही सुपरिणाम है, की मेग्नेटिक रेजोनेंस इमेजिंग के तेजी से विकसित होने वाले क्षेत्र में बड़ी उपयोगिता है।

नाभिकीय ऊर्जा तथा नाभिकीय अपशिष्ट प्रबंधन

मैं एक समस्या की तरफ आपका ध्यान आकर्षित करना चाहूंगा जिसके समाधान की बड़ी गहरी और तात्कालिक आवश्यकता है। वह समस्या है हमारे देश की बढ़ती हुई ऊर्जा की आवश्यकता को कैसे पूरा किया जाए। ऊर्जा की खपत किसी भी देश में निवास करने वाले लोगों के जीवन स्तर का सूचक होती है पर अधिसंख्य भारतवासियों के लिए ही यह बहुत कम है। संयुक्त राष्ट्र 174 देशों के मानव विकास और पर्यावरण संबंधी सालाना आंकड़े तैयार करता है। ये आंकड़े ऊर्जा के प्रयोग, प्रत्याशित मानव जीवन काल, पोषण और स्वास्थ्य, आय एवं गरीबी, शिक्षा, कार्बन डाइ–ऑक्साइड के उत्सर्जन स्तर आदि से संबंधित हैं। इनमें से तीन सूचकों के संयोजन द्वारा एक मानव विकास सूचकांक का प्राक्कलन किया जाता है। वे सूचक हैं : उम्र की मियाद जो प्रत्याशित जीवन काल द्वारा मापी जाती है; शैक्षिक अभ्याप्ति (एटेनमेंट) जो प्रौढ़ शिक्षा (दो–तिहाई भारण) तथा संयुक्त प्राइमरी, सेकेंडरी और हायर सेकेंडरी (टरशरी) शिक्षा (एक–तिहाई भारण) के नामांकन अनुपात के संयोजन द्वारा मापी जाती है; तथा जीवन यापन का स्तर जो बट्टाकृत (डिस्काउंटेड) सकल घरेलू उत्पाद प्रति व्यक्ति द्वारा मापी जाती है। संयुक्त राष्ट्र के मानव विकास सूचकांक (एच.डी.आई.) को मानव जीवन यापन स्तर के एक सही माप के रूप में ही स्वीकारा जाता है।

लारेंस लिवरमोर नेशनल लेबोरेट्री से जुड़े ऐलन पास्टरनेक ने सघन जनसंख्या वाले संसार के ऐसे साठ देशों को चुना जो संयुक्त राष्ट्र द्वारा मानव विकास सूचकांक प्राप्त देशों की सूची में शामिल थे। धरती की समग्र जनसंख्या का करीब 90 प्रतिशत ये देश प्रतिनिधित्व करते हैं। इन्हें नीचे के चित्र में दर्शाया गया है।

मानव विकास सूचकांक तथा बिजली की खपत के मध्य एक सह–संबंध पास्टरनेक को देखने को मिला। यह प्रदर्शित करने में उन्हें सफलता मिली कि किसी भी राष्ट्र के लोगों द्वारा प्रति व्यक्ति करीब 4000 इकाई (1 इकाई = 1 किलोवाट घंटा) की वार्षिक बिजली की खपत किए जाने पर मानव विकास सूचकांक एक उच्च (प्लैटो) मान को प्राप्त कर लेता है। यह मान सन् 1980 से लेकर 1997 तक के वर्षों के दौरान एक समान स्तर पर पाया गया। हालांकि यह सह–संबंध इतना पूर्ण भी नहीं है; अंत में हर देश की स्थिति भिन्न–भिन्न हो जाती है। इसके बावजूद, पास्टरनेक के निष्कर्ष के अनुसार गरीब देशों में मानव जीवन–स्तर के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए ''ऊर्जा विभाग (डिपार्टमेंट ऑफ एनर्जी) तथा अन्य एजेंसियों द्वारा सन् 2020 तक बिजली तथा प्राथमिक ऊर्जा की भूमंडलीय खपत संबंधी जो आंकड़े प्रस्तुत किए गए हैं उनसे कहीं अधिक'' खपत किए जाने की आवश्यकता होगी। अगर इस लक्ष्यपूर्ति के लिए विश्व स्तर पर सहमति हो जाती है तो ऊर्जा की चुनौती से निपटे जाना और भी लाजिमी हो जाता है।

भारत के लिए विद्युत ऊर्जा की प्रति व्यक्ति वार्षिक खपत करीब 400 इकाई है जो विकासशील राष्ट्रों के खपत का दसवां हिस्सा मात्र है। अन्य विकासशील देशों की भी कमोबेश यही स्थिति है। अतः आने वाले दशकों में विकासशील देशों को करीब 5×10^6 मेगावाट विद्युत उत्पादन क्षमता की आवश्यकता होगी। गौरतलब है कि विद्युत उत्पादन की वर्तमान क्षमता 1×10^6 मेगावाट तथा (विकासशील) औद्योगिक राष्ट्रों के लिए 2×10^6 मेगावाट है (विद्युत उत्पादन हमारी कुल ऊर्जा खपत का पांचवां हिस्सा ही है – बाकी का उपयोग परिवहन तथा तापन (हीटिंग) के प्रयोजनार्थ होता है)।

हमारी ऊर्जा की जरूरतों को पूरा करने के उपायों की खोज एक ऐसी ज्वलंत समस्या है कि हमें सभी संभव स्रोतों पर विचार करके एकदम वस्तुनिष्ठ ढंग से उनका मूल्यांकन करना होगा। इस कार्य हेतु अग्रलिखित सभी कारकों को ध्यान में रखना उपयोगी होगा : क्षमता, मूल्य, सुरक्षा, विश्वसनीयता तथा पर्यावरणीय प्रभाव। कोई भी अकेला स्रोत ऊर्जा की हमारी समस्त आवश्यकताओं को पूरा करने में असमर्थ है। हालांकि अनेक

लघु–स्तरीय ऊर्जा स्रोत, जेसे कि उपग्रहों के लिए सौर पेनल, भी उपलब्ध हैं पर हमें प्रमुख ऊर्जा स्रोतों पर ही ध्यान केंद्रित करना होगा।

ऐतिहासिक नजरिए से देखें तो धरती पर ऊर्जा रासायनिक अभिक्रियाओं जैसे कि कोयले, लकड़ी, प्राकृतिक गैस तथा पेट्रोलियम उत्पादों के दहन द्वारा ही प्राप्त की जाती रही है। जानवरों को ऊर्जा उन्हें उनके भोजन के जरिए प्राप्त होती है। काफी अर्से पूर्व ही इस बात को जान लिया गया था कि हमारे सूर्य जैसे तारे से विकिरित होने वाली ऊर्जा का स्रोत रासायनिक अभिक्रियाएं नहीं हो सकती।

अगर सूर्य का निर्माण सम्पूर्ण रूप से कोयले तथा आक्सीजन से हुआ मान लिया जाए तो वर्तमान दर से ऊर्जा का उत्पादन वह एक हजार से अधिक समयावधि तक नहीं कर पाता जबकि हम जानते हैं कि सूर्य करीब 5 अरब वर्षों से निरंतर ऊर्जा का उत्पादन कर रहा है।

नाभिकीय प्रक्रियाओं द्वारा भी ऊर्जा का उत्पादन संभव है। रासायनिक क्रियाओं की तुलना में करीब दस लाख गुना अधिक ऊर्जा नाभिकीय प्रक्रियाओं द्वारा प्राप्त हो सकती है। अतः यह सोचा गया कि तारों में ऊर्जा उत्पादन नाभिकीय प्रक्रियाओं द्वारा ही होना चाहिए। इसे संलयन की प्रक्रिया कहते हैं, जिसमें हाइड्रोजन हीलियम में परिवर्तित होकर ऊर्जा के उत्सर्जन का कारण बनता है। सूर्य में यही संलयन की प्रक्रिया चल रही है।

धरती पर इस प्रक्रिया द्वारा नियंत्रित रूप से ऊर्जा का उत्पादन कर पाना अभी हमारे लिए संभव नहीं हो पाया है। हाइड्रोजन बम की संहारक शक्ति के रूप में ही फिलहाल यह प्रक्रिया संभव हो पाई है। लेकिन एक और नाभिकीय प्रक्रिया, जिसे विखंडन प्रक्रिया की संज्ञा दी जाती है, को वैज्ञानिकों ने सीव बना दिया है। इस प्रक्रिया, जिसमें यूरेनियम जैसा कोई विशाल नाभिक छोटे–छोटे नाभिकों में खंडित होता है, द्वारा न्यूट्रॉनों तथा ऊर्जा का उत्सर्जन भी होता है। नियंत्रित रूप से इस विखंडन प्रक्रिया का इस्तेमाल नाभिकीय रिएक्टरों में किया गया है। इन रिएक्टरों द्वारा उत्पन्न ऊर्जा बिजली के रूप में हमारे घरों में भी पहुंचती है। परमाणु बम के निर्माण में भी विखंडन प्रक्रिया का यही सिद्धांत ही कार्य करता है।

विभिन्न प्रक्रियाओं में उत्सर्जित ऊर्जाओं की तुलना अधोलिखित आंकड़ों से की जा सकती है :

संलयन प्रक्रिया – 80 अरब किलोकैलोरी प्रति किलोग्राम। विखंडन प्रक्रिया – 19 अरब किलोकैलोरी प्रति किलोग्राम। कोयले की दहन क्रिया – 7200 किलोकैलोरी प्रति किलोग्राम।

नाभिकीय ऊर्जा के निम्नलिखित फायदे गिनाए जा सकते हैं :

1. सभी ईंधनों की तुलना में उत्पादित ऊर्जा उसी मिकदार में लिए गए ईंधन के लिए सर्वाधिक है।
2. लागत के मामले में विश्व के प्रमुख ऊर्जा स्रोत कोयले से मुकाबला करती है।
3. यूरेनियम, जो आधार पदार्थ है, प्रचुरता से उपलब्ध हैं
4. प्लूटोनियम, जो व्यावसायिक विद्युत संयंत्रों का एक उप–उत्पाद (बाई प्रोडक्ट) है, का भी ईंधन के रूप में इस्मेमाल किया जा सकता है।
5. ऊर्जा उत्पादन की सभी मुख्य प्रक्रियाओं की तुलना में उत्पादित अपशिष्ट की मात्रा न्यूनतम है। यह वातावरण में न तो कार्बन डाई ऑक्साइड को निर्मुक्त करती है और न नाइट्रोजन के आक्साइड तथा स्मॉग सृष्टिकारी सल्फर यौगिकों जैसे संदूषकों का ही उत्सर्जन करती हैं
6. विद्युत उत्पादन के अलावा नाभिकीय ऊर्जा कई अन्य फायदे भी प्रदान करती है। रिएक्टरें में निर्मित होने वाले रेडियोधर्मी पदार्थों (रेडियो समस्थानिकों आदि) का इस्तेमाल आयुर्विज्ञान, रेडियोग्राफी, अंतरिक्ष संबंधी अनुप्रयोगों तथा खाद्य पदार्थों के किरणन आदि में किया जाता है।

नाभिकीय ऊर्जा की प्रमुख समस्या रेडियोधर्मी अपशिष्टों की सृष्टि हैं किसी–किसी अपशिष्ट में तो बड़ी लम्बी समयावधि (हजारों वर्षों तुल्य) तक रेडियो सक्रियता मौजूद रहती है। अतः इतने लम्बे समय तक इन अपशिष्टों के नियंत्रित भंडारण तथा उनकी सुरक्षा की पूर्ण व्यवस्था की आवश्यकता है। यह एक गंभीर समस्या है जिसे दुनिया भर के वैज्ञानिक सुलझाने में लगे हैं।

समस्याएं

? उच्च रेडियोसक्रियता वाले अपशिष्टों का उत्पादन होता है जिसमें से कुछ अपशिष्ट तो बड़ी लम्बी समयावधि तक सक्रिय बने रहते हैं।

? लम्बे समय तक अपशिष्टों का भंडारण तथा सुरक्षित रूप से उनका निपटान अभी भी एक गंभीर समस्या है जिसका हल ढूंढ़ना बाकी है।

किसी व्यवसायिक रिएक्टर में बनने वाले अपशिष्ट पदार्थों को नीचे दी गई सारणी में दर्शाया गया है।

अब तक रेडियोधर्मी अपशिष्टों के भंडारण तथा उनके प्रबंधन की रणनीति के अंतर्गत इस अपशिष्ट को या तो सांद्रण द्वारा तरल रूप में बदल दिया जाता है या फिर उसका कांचन कर लवण की खदान (साल्ट माइन)

1000 मेगावाट के सामान्य जल रिएक्टर के कोड़ में खप चुके ईंधन को उससे विलग करने के दस वर्षों उपरांत लम्बी समयावधि (अर्द्धआयु झ 10वर्ष) तक रेडियोसकियतk प्रदर्शित करने वाले कुछ प्रमुख रेडियोधर्मी उत्पाद

न्यूक्लिआइड	अर्द्धआयु (वर्षों में)	प्रतिशत
एक्टिनाइड		
नेप्चूनियम – 237	2100000	4.5
प्लूटोनियम –238	80	1.4
प्लूटोनियम – 239	24000	51.4
प्लूटोनियम – 240	6600	23.8
प्लूटोनियम – 241	14	7.9
प्लूटोनियम – 242	380000	4.8
ऐमेरिशियम – 241	430	5.1
ऐमेरिशियम – 243	7400	0.9
क्यूरियस – 244	18	0.2
विखंडन उत्पाद		
सेलेनियम – 79	65000	0.2
क्रिप्टन – 85	11	0.3
स्ट्रांशियम – 90	29	11.4
जिर्कोनियम – 93	1500000	19.7
टेक्नीशियम – 99	210000	21.0
पैलेडियम – 107	6500000	6.2
टिन – 126	100000	0.9
आयोडीन – 129	17000000	4.9
सीजियम – 135	3000000	8.0
सीजियम – 137	30	27.0
समेरियम – 151	90	0.3

जैसे सुरक्षित परिवेश में उसे भंडारित कर दिया जाता है। इस अपशिष्ट का निक्षेपस्थान (रिपॉजिटरी) भूगर्भीय दृष्टि से निष्क्रिय क्षेत्र में स्थित होना जरूरी है ताकि लाखों–करोड़ों वर्षों की सुदीर्घ समयावधि में इस अपशिष्ट के स्थानांतरण की संभावना नगण्य हो। दीर्घावधि भंडारण के साथ प्रचुराद्भावन की संभावना से जुड़े प्रश्न भी हैं। इस समस्त प्रक्रिया से जुड़ी वैज्ञानिक अनिश्चितता जनता के मन में वास्तविक संशयों के साथ–साथ राजनैतिक दबावों को भी जन्म देती है। पाश्चात्य देशों में इन्हीं सब कारणों के चलते नाभिकीय ऊर्जा उत्पादन का कार्यक्रम कुछ शिथिल–सा पड़ गया है। लेकिन ध्यानपूर्वक गौर करने पर आप पाएंगे कि विकसित देशों में ऊर्जा की खपत का विकास संतृप्ति के बहुत निकट जा पहुंचने के कारण स्वयं में भी धीमा पड़ चुका है।

आज विश्व में 438 के करीब रिएक्टर कार्यशील हैं जो विश्व की कुल बिजली खपत का 16 प्रतिशत उत्पादित करने में अपना योगदान दे रहे हैं। भारत में फिलहाल चौदह रिएक्टर कार्य कर रहे हैं जो कुल 2720 मेगावाट

ऊर्जा संबंधी आंकड़े

नवीकरणीय ऊर्जा संभाव्यता तथा भारत में तत्संबंधी उपलब्धियां

(टेरी ऊर्जा आंकड़ों संबंधी डाइरेक्टरी तथा इयर बुक 2001/2002

स्रोत/प्रौद्योगिकियां	इकाई	सन्निकट संभाव्यता	उपलब्धियां (दिसंबर, 2000 तक)
पवन ऊर्जा	मेगावाट	45,000	1,267
लघु जल–ऊर्जा (25 मेगावाट तक)	मेगावाट	15,000	1,341
जीवभार ऊर्जा	मेगावाट	19,500	308
जीवभार गैसीकारक		16,000	35
जीवभार सह–उत्पादन (कोजेनरेशन)		3,500	273
शहरी तथा औद्योगिक अपशिष्ट आधारित ऊर्जा	मेगावाट	1,700	15.20
सौर प्रकाशवोल्टीय प्रणाली	मेगावाट/वर्ग किलोमीटर	20	47 (मेगावाट)
सौर जल तापन	दस लाख वर्ग मीटर (संग्राही क्षेत्रफल)	140	0.55
जैवगैस सयंत्र	दस लाख	12	3.10
उन्नत जीवभार चूल्हे (खाना पकाने के स्टोव)	दस लाख	120	33.00

स्रोत : एम.एन.ई.एस., 2001, नई दिल्ली : गैर–परंपरागत ऊर्जा स्रोत मंत्रालय

भारत में नाभिकीय ऊर्जा

कुल नाभिकीय ऊर्जा उत्पादन क्षमता : 2720 मेगावाट

भारत के नाभिकीय ऊर्जा कार्यक्रम के अंतर्गत चौदह रिएक्टर कार्यशील हैं। इनमें दो क्वथन जल रिएक्टर (BWR) तथा बारह दाबित भारी जल रिएक्टर (PHWR) हैं। तारापुर (महाराष्ट्र) में 500 मेगावाट क्षमता के दो दाबित भारी जल रिएक्टर फिलहाल निर्माणाधीन हैं। भारतीय नाभिकीय ऊर्जा निगम (NPCEL) नामक पब्लिक सेक्टर कम्पनी भारत में नाभिकीय ऊर्जा संयंत्रों के स्वामित्व, निर्माण कार्य तथा रख–रखाव और संचालन के लिए उत्तरदायी है। यह निगम भारत में नाभिकीय ऊर्जा कार्यक्रम को बढ़ावा देने के लिए अग्रणी भूमिका निभा रहा है। निगम की योजना सन् 2020 के अंत तक 20,000 मेगावाट की नाभिकीय ऊर्जा क्षमता के उत्पादन लक्ष्य को प्राप्त करना है।

कार्यशील नाभिकीय ऊर्जा रिएक्टर

स्थान	रिएक्टर प्रकार/क्षमता
तारापुर	क्वथन जल रिएक्टर/2×160 मेगावाट,
	1×200 मेगावाट तथा/2×220 मेगावाट
कलपक्कम	दाबित भारी जी रिएक्टर/2×170 मेगावाट
नरोरा	दाबित भारी जल रिएक्टर/2×220 मेगावाट
काकरापार	दाबित भारी जल रिएक्टर/2×220 मेगावाट
कैगा	दाबित भारी जल रिएक्टर/2×220 मेगावाट

निर्माणाधीन रिएक्टर

स्थान	रिएक्टर प्रकार/क्षमता	संभावित क्रांतिकता तारीख
तारापुर	दाबित भारी जल रिएक्टर/ 2×500 मेगावाट	★इकाई 3–जुलाई, 2006 ★ इकाई 4–अक्टूबर, 2005

स्रोत : परमाणु ऊर्जा विभाग, भारत सरकार
वेबसाइट : www.dae.gov.in

बिजली का उत्पादन कर रहे हैं। इस तरह हम देखते हैं कि भूमंडलीय विद्युत उत्पादन का एक बड़ा हिस्सा भविष्य में नाभिकीय ऊर्जा द्वारा ही संभवतया प्राप्त किया जाएगा।

हाल ही में त्वरित्रों के विकास की दिशा में किए जाने वाले शोध कार्यों के चलते रेडियोधर्मी अपशिष्ट प्रबंधन की जटिल समस्या को सुलझाने की एक नवीन आशा जागृत हुई है। इसके तहत समस्त रेडियोधर्मी अपशिष्ट पदार्थों का निराकरण किया जाना वास्तव में संभव हो सकता है। न केवल इतना बल्कि बदले में कुछ फालतू ऊर्जा भी उत्पादित की जा सकती है। इस नायाब अवधारणा को त्वरित्र चालित उपक्रांतिक निकाय (एक्सबेरेटर ड्रिवन सब–क्रिटिकल सिस्टम्स या ए.डी.एस.) का नाम दिया गया है।

वास्तव में ए.डी.एस. अवधारणा एक उपक्रांतिक रिएक्टर की क्रियाविधि से जुड़ी है जिसमें एक त्वरित्र द्वारा उत्पादित न्यूट्रॉनों की रिएक्टर निरंतर प्राप्त होती खेप के कारण उसमें विखंडन प्रक्रिया द्वारा उत्पादित न्यूट्रॉनों की संख्या में वृद्धि होती है। इसमें स्वपोषी (सेल्फ–ससटेंड) श्रृंखला प्रक्रिया, जिसमें न्यूट्रॉनों की संख्या में गुणोत्तर रूप से वृद्धि होती है, की कोई संभावना नहीं होती है। समाच्छादी आयतन में न्यूट्रॉनों के फ्लक्स, जो 10^{16} न्यूटॉन/वर्ग सेंटीमीटर/सेकेंड तक हो सकता है, द्वारा 10 का गुणन कारक प्राप्त किया जा सकता है। यह 0.9 के क्रांतिकता मान को सूचित करता है।

त्वरित्र द्वारा प्राप्त होने वाले न्यूट्रॉनों का प्रवाह जब बंद हो जाता है तो रिएक्टर में भी नाभिकीय प्रक्रियाएं कुछ सेकेंडों के भीतर ही चराघातांकी रूप से क्षय को प्राप्त होती हुई रुक जाती है तथा अनियंत्रित एवं उच्छृंखल नाभिकियों प्रक्रियाओं का तब उन पर कोई भी प्रवाह नहीं पड़ता है।

उपक्रांतिक रिएक्टर प्रणाली का एक और फायदा यह है कि यह नानाविध ईंधनों जैसे कि थोरियम – 228 या यूरेनियम – 233 के प्रयोग द्वारा भी कार्य करने में सक्षम होता है। लेकिन अभी इस दिशा में और भी शोध एवं विकास कार्य किए जाने की आवश्यकता है ताकि त्वरित्र से प्राप्त होने वाले निर्धारित शक्ति के न्यूट्रॉन पुंज को बगैर किसी विशेष शक्ति ह्रास के प्राप्त किया जा सकें इसके साथ ही त्वरित्र की विश्वसनीयता भी 95 प्रतिशत से अधिक होनी चाहिए तथा इसकी कीमत भी कम से कम होनी चाहिए।

★नाभिकीय विज्ञान केंद्र, अरुणा आसफ अली मार्ग, नई दिल्ली – 110067

हिन्दी रूपांतरण : डॉ. प्रदीप कुमार मुखर्जी

• • •